<u>प्रतिवेद्य</u>

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

<u>दांडिक अपील सं. 538-539/2019</u>

<u>(विशेष अनुमति याचिका सं. 94-95/2019 से उत्पन्न)</u>

गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय ...अपीलार्थी

बनाम

राहुल मोदी व अन्य ...प्रत्यर्थी(गण)

संग

<u>स्थानांतरण याचिका (आप.) सं. 35/2019</u>

(गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय व अन्य बनाम विवेक हरिव्यासी व अन्य)

<u>निर्णय</u>

<u>न्या., उदय उमेश ललित</u>

1. अनुमति प्रदानित|
2. यह अपीलें दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली, द्वारा रिट याचिका(आप.) सं. 3842 व 3843/2018 में दिनांक 20.12.2018 को पारित सामान्य अंतरिम आदेश के सत्यता को चुनौती देती हैं|
3. कम्पनी अधिनियम 2013(संक्षिप्त में, "2013 अधिनियम") की धारा 212(1)(सी), परिसीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम 2008(संक्षिप्त में, "2008 अधिनियम") की धारा 43(2) और धारा (3)(सी)(i) के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केन्द्रीय सरकार ने अपने आदेश सं 07/115/2018/सीएल-II(एनडब्लूआर) के द्वारा आदर्श ग्रुप ऑफ़ कम्पनीज और प.द.भ. (संक्षिप्त में, 'द ग्रुप') के कार्यों की जाँच का निर्देशन गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के अधिकारों द्वारा दिया जैसा कि गं.धो.जाँ.का के निदेशक द्वारा नामांकित है| दिनांक 20.06.2018 के आदेश का सुसंगत भाग इस प्रकार था:-

> "चूँकि केन्द्रीय सरकार को, कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 212(1)(सी) के अंतर्गत अधिकार है कि जनहित में कम्पनी के कार्यों की जाँच का आदेश गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय (गं.धो.जाँ.का) को दे सकती है|
>
> 2. और जबकि केन्द्रीय सरकार को परिसीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम 2008 की धारा 43(2) व (3)(सी)(i) के तहत परिसीमित

दायित्व भागीदारी (प.द.भ) के कार्यों की जाँच का आदेश देने का भी अधिकार है|

3. और जबकि केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाई राय के आधार पर, निम्न कंपनियों के कार्यों की जाँच का निर्णय किया गया है:-

सं.	सीआईएन	कम्पनी/ प.द.भ. का नाम	नया पता	क्षेत्र	पैन सं.	स्थिति
1	U45201HR2000PLC045738	आदर्श बिल्ड एस्टेट लिमिटेड	प्रथम तल, ब्लॉक बी, वाटिका अट्रियम गोल्फ कोर्स रोड, सेक्टर-53 गुडगाँव	हरियाणा	AAJCA1907A	चालू
2 से 124	...	...	...	...	...	...
125	U45201RJ2013PTC042465	वाटरफॉल रियल एस्टेट्स प्राइवेट लिमिटेड	जे-7, मोती डूंगरी रोड, जयपुर	राजस्थान	AABCW3826E	चालू

4. इसलिए, अब, कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 212(1)(सी) और प.द.भ. अधिनियम 2008 की धारा 43(2) & (3)(सी)(i) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केन्द्रीय सरकार ने उपरोक्त नामित कंपनियों व प.द.भ. के कार्यों की जाँच, गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के निदेशक द्वारा नामित अधिकारियों को करने का आदेश दिया है|

5. गं.धो.जाँ.का को निम्नगत क्षेत्रों में जाँच करनी चाहिए (उपरोक्त कम्पनियों और प.द.भ.) इस के अतिरिक्त जाँच के दौरान सामने आनेवाले अन्य मामलों की भी जाँच करेगी|

(i) इसके लाभार्थियों के साथ वसूले धन के परिवर्तन के परिमाण की पहचान और धन के आवर्तन की जाँच का पता लगाने हेतु|

(ii) कुप्रबंध, लापरवाही व कपट की घटनाओं को पहचानने हेतु|

(iii) लेखाधिकारियों, के.एम.पी. व स्वछंद निदेशकों व अन्य व्यक्तियों की कथित कपट में भूमिका का पता लगाने हेतु|

(iv) कथित कपट में किसी अन्य तत्त्व का वाहक के रूप में प्रयोग का परिक्षण|

(v) अधिनियम के सांविधिक प्रावधान के अनुपालन व कोर्पोरेट संचालन पर इसके प्रभाव की पहचान हेतु|

6. कि कम्पनी अधिनियम, 2013 की धारा 217 व प.द.भ.अधिनियम, 2008 के अध्याय IX IXके तहत नियुक्त निरीक्षक(कों) को प्राप्त शक्तियों का पूर्ण प्रयोग करें| निरीक्षक अपनी जाँच पूरी कर आदेश जारी होने की तिथि से तीन महीने के अन्दर रिपोर्ट केन्द्रीय सरकार को जमा कराए|

7. यह आदेश केन्द्रीय सरकार की ओर से व केन्द्रीय सरकार के लिए जारी किया गया था|

हस्ताक्षर
(संतोष कुमार)
संयुक्त निदेशक"

4. उसी तिथि पर दिनांक 20.06.2018 को गं.धो.जाँ.का के निदेशक द्वारा भी आदेश पारित हुआ| उक्त आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है :-

"3. अब, इसलिए, कम्पनीज अधिनियम 2013 की धारा 212(1) के तहत प्रदत्त शक्ति के प्रयोग द्वारा निम्नलिखित अधिकारियों को उपरोक्त संस्थाओं के कार्यों की जाँच कार्यवाही के लिए निरीक्षक नामित किया गया है व कम्पनी अधिनियम 2013 में इन्हें मिली पूर्ण शक्तियों का उपयोग करेंगें:

1.श्री पी.सी मौर्या, अतिरिक्त निदेशक
2.श्री प्रशांत बालियान, उप-निदेशक
3.श्री जी.एल.मीणा , वरिष्ठ सहायक निदेशक
4.श्री कुमार गौतम, सहायक निदेशक

4. और आगे, कम्पनीज अधिनियम की धारा 2013 की धारा 212(4) के अंतर्गत श्री प्रशांत बालियान, उप-निदेशक को कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 212 (4) के तहत श्री प्रशांत बालियान उप-निदेशक को उपरोक्त जाँच का जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया| जाँच अधिकारी को कम्पनी अधिनियम, 2013 की धारा 217 के तहत निरीक्षक की सारी शक्तियाँ मिलेंगी| जाँच आदेश के अनुसार निम्नलिखित मुद्दों की विशिष्ट जाँच के साथ-साथ आगे आने वाले मुद्दों की भी जाँच हो:

1. इसके लाभार्थियों के साथ वसूले धन के परिवर्तन के परिमाण की पहचान और धन के आवर्तन की जाँच और पता लगाने हेतु;

2. कुप्रबंध, लापरवाही और कपट के उदाहरणों की पहचान;

3. लेखाधिकारियों, के.एम.पी और स्वतंत्र निदेशकों या कथित कपट में अन्य व्यक्ति की भूमिका का पता लगाना;

4. कथित कपट में किसी अन्य तत्त्व का वाहक के रूप में हुए प्रयोग का परीक्षण; और

5. अधिनियम के सांविधिक प्रावधान के अनुपालन व कॉर्पोरेट संचालन पर इसके प्रभाव की पहचान हेतु;

5. निरीक्षक व जाँच अधिकारी जाँच पूरी करें और रिपोर्ट तीन महीने में जमा कराए|"

5. दिनांक 20.06.2018 के आदेश के खंड 6 में उल्लिखित अवधि 19.09.2018 को समाप्त हो गई| जाँच के दौरान मिली सामग्री के आधार पर, 2017 कम्पनी नियम के, नियम(2) के तहत अनुमोदन गं.धो.जाँ.का निदेशक से कंपनी धोखाधड़ी जाँच कार्यालय द्वारा की गई जाँच के संबंध में गिरफ्तार हुए गिरफ्तारियों के संबंध में) तीनों अभियुक्त व्यक्तियों अर्थात राहुल मोदी, मुकेश मोदी और विवेक हरिव्यासी को गिरफ्तार करने हेतु माँगा गया| अनुमोदन गं.धो.जाँ.का के निदेशक द्वारा दिनांक

10.12.2018 को दिया गया| 2017 नियमों के अंतर्गत नियम 4 और 5 के तहत जारी आदेश में कार्यवाही "07/115/2018 सीएल-II(एनडब्लूआर) दिनांक 20.06.2018" से सन्दर्भ स्थापित किया|

अभियुक्त उसी हिसाब से 10.12.2018 को गिरफ्तार हुए| 2017 के नियमों का अनुपालन हुआ और वह ड्यूटी मैजिस्ट्रेट, ज़िला न्यायालय, गुरुग्राम, हरियाणा के समक्ष 11.12.2018 को पेश हुए|

6. अपीलार्थी की ओर से एवं अभियुक्त की ओर से अधिवक्ता को सुनने के बाद न्यायिक मैजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, गुरुग्राम ने 11.12.2018 दिनांकित आदेश द्वारा 14.12.2018 तक रिमांड देकर विशेष न्यायालय (कम्पनी अधिनियम), गुरुग्राम के समक्ष 14.12.2018 को पेश होने का निर्देश दिया| अभियुक्त की हिरासत के लिए मामला बनाने के लिए रिमांड के लिए आवेदन माँगा गया| यह मामला न्यायिक मैजिस्ट्रेट द्वारा इस प्रकार निपटाया गया:-

> "5. अभियुक्त सं. 1 व 2 के अधिवक्ता ने बहस की कि दोनों ही अभियुक्तों ने 20 जून से हुई जाँच में सहयोग किया व उनके कार्यालय भी सील है| इसके बावजूद, अब बिना किसी वजह के रिमांड की माँग की गई, इसलिए, इसे अस्वीकृत किया जाए|
>
> 6. अभिलेख पर दस्तावेजों के अध्ययन से पता चलता है कि गंभीर आरोप है एवं दिनांक 20.06.2018 के आदेश अनुसार जाँच शुरू करने का आदेश दिया गया व दं.प्र.सं की धारा 167 के तहत अभियुक्त गं.धो.जाँ.का की रिमांड लेकर न्यायालय में पेश किया गया| धारा 436(1)(बी) के तहत यह न्यायालय मैजिस्ट्रेट की शक्तियों का उपयोग करेगी| इस स्तर पर रिमांड माँगी गई है| कथित अपराध निश्चित रूप से गम्भीर है व गिरफ़्तारी के आदेश अभिलेख में उपस्थित है| इन दस्तावेजों के परिणामस्वरूप अभियुक्तों को गिरफ्तार कर पेश किया गया| निसंदेह, यह लोग गं.धो.जाँ.का द्वारा जारी नोटिसों पर पेश हुए हैं, परन्तु अभी तक जाँच पूरी नहीं हुई क्योंकि जाँच के कुछ हिस्सों में व्यैक्तिक भागीदारी की आवश्यकता है| यह मामला प्रथम दृष्टया कम्पनी अधिनियम की धारा 447 को आकर्षित करता है जिस कारण यह अपराध पूर्णतः संज्ञेय व गैर-ज़मानती हैं| हिरासत में जाँच का मुख्य आधार निकले हुए पैसों का आगे हुआ इस्तेमाल व लाभार्थियों का पता लगाना है| इसके अतिरिक्त, संपत्तियों की पहचान और बहीखाता में कथित ऋण व उधारों की व्याख्या सिर्फ अभियुक्तों द्वारा दी जा सकती है पर वो अभी तक ऐसी कोई व्याख्या नहीं दे पाए हैं| यहाँ तक की जो लोग हिरासत में हैं वो भी जाँच में सही रूप से सहयोग नहीं कर रहे हैं ताकि असल तथ्य सामने आ सके| इन आधारों को गहन और व्यापक जाँच की आवश्यकता है इसलिए इन अभियुक्तों की तीन दिन की हिरासत गं.धो.जाँ.का को सौंपना सही होगा| आरोपियों को कम्पनी अधिनियम के तहत 14.12.2018 को विशेष न्यायालय के समक्ष पेश किया जाए| इस आदेश की प्रतिलिपि जाँच अधिकारी व अभियुक्तों को दी जाए जैसे की उन्होंने माँगा था| तीनों आरोपित व्यक्तियों यानि मुकेश मोदी, राहुल मोदी और विवेक हरिव्यासी की तीन दिन की हिरासत गं.धो.जाँ.का को दी गई है| फाइल को कम्पनी अधिनियम के तहत विशेष न्यायालय भेजा जाए|"

7. दिनांक 13.12.2008 को गं.धो.जाँ.का द्वारा केन्द्रीय सरकार से जाँच पूरी करने की अवधि बढ़ाने हेतु और 57 मामलों की जाँच रिपोर्ट जमा करने हेतु अनुमति स्वीकृत की गई, जो पूरे होने के

अलग-अलग चरणों पर है या उनकी जाँच पूरी करने हेतु मिली अवधि या तो समाप्त हो चुकी है या समाप्त होने वाली है| इनमें से एक मामला सूची में संख्या नं. 24 पर एक समूह का था| दिनांक 14.12.2018 को आरोपी विशेष न्यायालय में रिमांड के नए आवेदन के साथ पेश हुए| *अन्य बातों के साथ,* हिरासत के विस्तार की प्रार्थना का विरोध अभियुक्तों द्वारा इस आधार पर किया गया कि दिनांक 20.06.2018 के आदेश में जाँच की नियमित अवधि समाप्त हो चुकी थी व इस प्रकार की आगामी कार्यवाही को गैर-कानूनी बताया| कार्यवाही के दौरान, 57 मामले जिनकी जाँच पूरी नहीं हो सकी उसकी अवधि बढ़ाने हेतु प्रस्ताव विशेष न्यायालय के सामने रखा गया| अभिलेख के अध्ययन के बाद, विशेष न्यायालय ने पाया कि आगे की रिमांड हेतु आवेदन की माँग उचित है| इसलिए, अभियुक्त की पुलिस हिरासत 18.12.2018 तक बढ़ा दी गई| विशेष न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांकित 14.12.2018 के पैरा 6 इस प्रकार रहा:-

> "6. कम्पनी अधिनियम की धारा 212(3) के उपबंधों अनुसार आदिष्ट जाँच निर्दिष्ट समय में पूर्ण हो जानी चाहिए| परन्तु समस्या यह है कि अगर ऐसा नहीं हुआ तो इसका परिणाम क्या होगा या क्या आगे की कार्यवाही व जाँच गैर-क़ानूनी मानी जाएगी| इस न्यायालय का उत्तर ना है क्योंकि उल्लिखित समय सीमा जाँच को समयबद्ध रूप में पूरी करने हेतु है परन्तु कथित समय सीमा उस प्राधिकार द्वारा समय समय पर आगे बढ़ाई जा सकती है| और इस मामले में सारी जाँच के बाद टीम ने रिपोर्ट सक्षम प्राधिकार, जो कि गं.धो.जाँ.का के निदेशक है, को सौंपी जिन्होंने अभियुक्त को गिरफ्तार कर टीम को जाँच आगे बढ़ाने की अनुमति दी, जो दिए तथ्यों व परिस्थिति अनुसार आगे बढ़ सकती है| तब धारा 212(3) का उद्देश्य 2013 कम्पनी अधिनियम के अध्याय XIV के तहत प्रदान प्रक्रिया अनुसार जाँच की अनुमती प्रदान करना है और उपधारा 6 के अनुसार कथित अपराध संज्ञेय और गैर-ज़मानती है और इसलिए गं.धो.जाँ.का को इससे जुड़े व्यक्तियों को गिरफ्तार कर उनकी रिमांड को मद्देनज़र रखते हुए केन्द्रीय सरकार को अंतिम रिपोर्ट देनी होगी| इसलिए गिरफ्तारी के बाद न्यायालय के समक्ष रिपोर्ट पेश करने का मुद्दा अनिवार्य है परन्तु अभियुक्त की गिरफ्तारी से पूर्व इसे करना समयबद्ध कार्य नहीं है जिसका उल्लंघन आगे की जाँच में कानूनी बाधा बन सकती है|"

समूह के संबंध में प्रस्ताव केन्द्रीय सरकार द्वारा पारित आदेश दिनांकित 14.12.2018 द्वारा स्वीकार किया गया व 30.06.2019 तक का विस्तार दिया गया|

8. दिनांक 17.12.2018 को रिट याचिका (आप.) सं 3842 & 3843/2018, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 व 227 सहपठित दं.प्र.सं की धारा 482 के तहत राहुल मोदी और मुकेश मोदी द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय में दायर किया गया| यह प्रस्तुत किया गया कि दिनांक 20.06.2018 के आदेश में दिए जाँच पूरी करने हेतु समय सीमा के समाप्त होने के साथ आगे की हुई कार्यवाही समेत प्रत्यर्थी की गिरफ़्तारी गैरकानूनी और कानून के किसी भी अधिकार के बिना है| इसलिए रिट याचिकाओं में 19.09.2018 के बाद हुई जाँच को अवैध और क्षेत्राधिकार से बाहर घोषित करने की प्रार्थना की और बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट द्वारा 10.12.2018 को हुई अवैध गिरफ़्तारी से बरी करने की प्रार्थना भी की गई| दोनों याचिकाओं में की प्रार्थनाएँ लगभग एक जैसी और इस प्रकार है:

क. "परमादेश रिट या कोई और उचित रिट/निर्देश/आदेश, रिट के रूप में जारी कर घोषित करें कि प्रत्यर्थी सं 2 से 4 की कम्पनी अधिनियम 2013 की धारा 2012(2) के तहत समय समाप्त होने के पश्चात् जाँच करने की शक्ति अवैध और असंवैधानिक है|

ख. परमादेश रिट या कोई और उचित रिट/निर्देश/आदेश रिट के रूप में जारी कर घोषित करें कि आदेश सं- 07/115/2018-सीएल-II दिनांक 20.06.2018, 19.09.2018 के बाद फ़ाइल सं गं.धो.जाँ.का/ आईएनवी/एओआई/2018-19- एजिसी & एल/ 842-966 में की गई जाँच अवैध व क्षेत्राधिकार से बाहर है|

ग. रिट/निर्देश/आदेश जारी कर घोषित करें कि याची की 10.12.2018 को नई दिल्ली में प्रत्यर्थी 2 के कार्यालय में प्रत्यर्थी 3 द्वारा गिरफ़्तारी का एलान करते हुए और वहाँ से शुरू होनेवाली कार्यवाही क्षेत्राधिकार से बाहर व अवैध है और याची राहुल मोदी को तुरंत रिहा किया जाए|

घ. बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी कर अपीलार्थी राहुल मोदी की दिनांक 10.12.2018 को नई दिल्ली में अवैध गिरफ़्तारी से तुरंत रिहाई का निर्देश और परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी 2 से 4 की अवैध हिरासत दे;

9. यह रिट याचिकाएँ उच्च न्यायालय के समक्ष 18.12.2018 को आई और निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:

"भारत संघ की ओर से पेश हुई फ़ाज़िल ए.एस.जी श्रीमती मनिंदर आचार्य के निवेदन पर उन्हें निर्देशक गं.धो.जाँ.का द्वारा रिपोर्ट जमा होने की अवधि बढ़ाने तक याचिकाओं की सुनवाई स्थगित है|"

उसी दिन अभियुक्तगण को विशेष न्यायालय में पेश किया गया और जाँच पूरी करने हेतु हिरासत में लिए जाना आवश्यक जान पड़ने के बाद, दोषियों को 21.12.2018 तक पुलिस हिरासत में भेज दिया गया| विशेष न्यायालय के आदेश के उचित भाग इस प्रकार थे:-

"2. गं.धो.जाँ.का ने अधोहस्ताक्षरी के समक्ष पूर्ण टिप्पण कार्यवाही रखी जिसमें उनके आखरी तारीख़ से आज तक के अन्वेषण को दर्शाया गया है| जैसा कि शिकायतकर्ता के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया और केस डायरी को टिप्पण पत्रिका के रूप में देखते हुए शिकायतकर्ता के अधिवक्ता की प्रस्तुति के अनुसार जिस दिन से आरोपी शिकायतकर्ता की हिरासत में सौंपा गया तब से आज तक की केस डायरी का अध्ययन नोटिंग शीट के रूप में करने के पश्चात यह सामने आया कि निस्संदेह पूरे घोटाले से जुड़ी कुछ और बातों का खुलासा आरोपी द्वारा किया गया जो अप्रकाशित संपत्ति के प्रकटन का नया मामला उत्पन्न करता है और इस प्रकार आरोपित व्यक्तियों की आगे की हिरासत प्रार्थना को आगामी साक्ष्य और स्थिति के सम्मुख रखना अपेक्षित है और मामले की आगे की जाँच आरोपी द्वारा अत्यधिक पैसे की वसूली के तथ्यों के प्रकटन अनुसार, 14.12.2018 के आदेश को मद्देनज़र रखते हुए| इस प्रकार, इस प्रार्थना को उचित पाते हुए और हिरासतीय पूछताछ की प्रार्थना अनिवार्य जाँच को न्यायसंगत रूप में अंत करने हेतु आवश्यक होने के कारण प्रस्तुत आवेदन

को मंज़ूर कर तीनों आरोपियों को गं.धो.जाँ.का की आगे की हिरासत में 21.12.2018 के दोपहर 2 बजे तक भेजा जाता है|"

10. रिट याचिकाएँ दिनांक 20.12.2018 को उच्च न्यायालय के समक्ष आई| उच्च न्यायालय ने एक नोटिस जारी किया जो उसे 31.01.2019 को वापसी योग्य बनाता था| उसके बाद उच्च न्यायालय ने इस पर विचार किया कि प्रत्यर्थी को जल्द रिहा कर अंतरिम राहत देनी चाहिए या नहीं| दोनों पक्षों को सुना गया और रिट याचिकाओं में विचार हेतु उठी समस्याओं को इस प्रकार लिखा गया:

"क. यदि सक्षम प्राधिकार की ओर से मिला कार्योतर विस्तार विधि अनुसार सही है या नहीं, और

ख. यदि अपीलार्थी के पक्ष में बने निहित अधिकार, बीच में, कथित रूप से जब अपीलार्थी के खिलाफ जाँच करने हेतु कोई कानूनी स्वीकृती नहीं थी जिससे उपरोक्त कार्यवाही और खासकर उनकी गिरफ्तारियाँ गैरकानूनी है, बिना क्षेत्रधिकारिता व कानून के विपरीत है|"

11. अंतरिम राहत प्रदान करने के परिपेक्ष्य में जब इस मुद्दे पर विचार हुआ, जैसा कि अपीलार्थी(गण) के आवेदन में प्रार्थना की गई रिट याचिका सं. 3842/2018 के आवेदन आ.ति.आवे सं. 50035/2018 और रिट याचिका (आप.) में सं 3843/2018 निम्नलिखित इस प्रकार कहा गया है:

"15. पक्षकारों की ओर से प्रस्तुतियों को मद्देनज़र रखते हुए वर्तमान आवेदनों में विचरण हेतु जो समस्याएं उत्त्पन्न हुई वह इस प्रकार है:-

"क. क्या यह न्यायालय भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका की कार्यवाही में सक्षम मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड के आदेश की सत्यता, वैधता और विधिमन्यता का परीक्षण कर सकती है/और

ख. क्या इस न्यायालय के पास वर्तमान बंदी प्रत्यक्षीकरण का न्याय निर्णयन करने का क्षेत्राधिकार है, इस परिस्थिति के मद्देनज़र कि गुरुग्राम के समक्ष मैजिस्ट्रेट द्वारा दिए गए रिमांड आदेश जिस पर विशेषकर कोई हमला नहीं किया गया?"

12. उच्च न्यायालय ने अपने आदेश दिनांकित 20.12.2018 में रिट याचिकाओं के लम्बन के दौरान उनके 5 लाख की दो अलग अलग व्यक्तिगत बंधपत्र दो स्थानीय प्रतिभूतियों के साथ प्रस्तुत करते हुए आदेश में अपने आदेश कथित राहुल मोदी और मुकेश मोदी की अंतरिम बेल पर रिहाई का निर्देश उल्लिखित शर्तों के अधीन है| अपने आदेश के दौरान उच्च न्यायालय द्वारा निम्नगत टिप्पणियाँ अनुच्छेद 22 से 30 तक इस प्रकार है:-

"22. उपरोक्त निर्णयों के आधार पर और पक्षकारों द्वारा पेश बहसों को मद्देनज़र रखते हुए, हमें इस स्तर पर यह पता करना है कि क्या अपीलार्थीगणों की गिरफ़्तारी गैरकानूनी और विधि के प्राधिकार से बाहर है; और क्या वर्तमान आवेदनों में मिला आगामी रिमांड आदेश जो गिरफ़्तारी को पूरा करता है इस न्यायालय की परीक्षण सीमा से बाहर है|

23. इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि, सक्षम प्राधिकार के आदेश दिनांकित 20.06.2018 द्वारा गं.धो.जाँ.का को लोकहित के विषय में कथित संस्थानों की कार्यवाही की जाँच निर्देशित है,

परिस्थिति से कोई मतभेद नहीं है कि सक्षम प्राधिकार द्वारा दिनांकित 20.06.2018 के आदेश में जो समय सीमा नियमित की गई वह 19.09.2018 को समाप्त हो गई| इस तथ्य से भी कोई मतभेद नहीं है कि गं.धो.जाँ.का ने सक्षम प्राधिकार से आगे की जाँच हेतु कथित अधिनियम के धारा 212 के प्रावधानों के अधिदेश अनुसार 13.12.2018 को समय सीमा के विस्तार की माँग की जो सक्षम प्राधिकार द्वारा इस आशय में दिए गए समय के समाप्त होने के ढाई महीने बाद का समय है|

24. परिस्थिति से कोई मतभेद नहीं है कि, सक्षम प्राधिकार द्वारा *कार्योत्तर* विस्तार 14.12.2018 को पर्वव्यापी रूप में ही दिया गया| इसलिए, प्रथम दृष्टया यह सिद्ध है कि 10.12.2018 को जब अपीलकर्ता गं.धो.जाँ.का द्वारा गिरफ़्तार हुए, तब 20.06.2018 के आदेश में जाँच के बाद रिपोर्ट जमा करने हेतु निश्चित समय सीमा पहले ही समाप्त हो चुकी थी| आगे यह कहना उचित है कि उक्त आदेश में उस समय पर गं.धो.जाँ.का ने ना ही कार्योत्तर समय का विस्तार माँगा और न ही उनके द्वारा कार्योत्तर समय का विस्तार प्राप्त किया गया|

25. इन परिस्तिथियों में, गं.धो.जाँ.का के द्वारा निर्धारित नियमों के साथ पढ़ा गया जिसमें केंद्र सरकार द्वारा जाँच-पड़ताल को दी समय सीमा में पूरा करने का अधिकार दिया| कि हमारी दृष्टि से गिरफ़्तारी आदेश गैरकानूनी, अवैध व क्षेत्राधिकार से बाहर है|

26. एक क़ानूनी निकाय इन मानकों पर आयोजित हो जिससे यह अपने संचालन को न्यायित करने का दावा कर पाएँ|

27. आवेदकों की अवैध हिरासत, हमारी नज़र में, संबंधित मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड आदेश से सही साबित नहीं हो सकती| आवेदकों का गं.धो.जाँ.का द्वारा सख्ती और ईमानदारी से अपने कार्य करने व हर विधि और नियम का पालन करने के आग्रह का अधिकार पूर्ण रूप से सही है| आवेदकों की 10.12.2018 को हुई गिरफ़्तारी पूर्ववर्ती परिस्थितियों और मौजूदा व्यक्ति को ध्यान में रखते हुए अवैध व कानूनी मंज़ूरी और विधि क्षेत्राधिकार से बाहर है|

28. यह न्यायालय बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका द्वारा आवेदकों की लगातार अवैध हिरासत को उचित साबित नहीं कर सकती; उन परिस्थितियों पर जिन पर मैजिस्ट्रेट ने रिमांड आदेश पारित किया| आवेदकों की हिरासत हमारी नज़र में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के व्यक्तिगत स्वतंत्रता के उद्देश्यों का उल्लंघन करती है| आवेदकों की निरंतर हिरासत कानूनी मंज़ूरी से परे है|

29. अन्यथा भी, दिनांक 14.12.2018 के रिमांड आदेश में निम्नगत बातें उल्लिखित हैं:-

> “6. .....इस मामले में, जब टीम ने जाँच पूर्ण कर रिपोर्ट सक्षम प्राधिकार (निदेशक, गं.धो.जाँ.का) को प्रस्तुत की, तो उन्होंने टीम को आरोपित व्यक्तियों को गिरफ्तार कर आगे की जाँच करने का निर्देश दिया, जो कि प्रस्तुत तथ्यों और परिस्थितियों के हिसाब से विस्तार योग्य है|” यह गलत, त्रुटिपूर्ण और विधि व आधिकारिक रिकॉर्ड के विरुद्ध है|

30. यह परिस्थिति से अलग है कि, आवेदक नई दिल्ली स्थित गं.धो.जाँ.का के कार्यालय से दिनांक 10.12.2018 को गिरफ्तार किए गए थे जो गुरुग्राम द्वारा पारित रिमांड आदेश को विधि क्षेत्राधिकार से बाहर घोषित करते है|”

13. इसलिए, वास्तविक रिट याचिकाकर्ता राहुल मोदी और मुकेश मोदी ज़मानत पर रिहा हुए| उच्च न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त आदेश दिनांकित 20.12.2018 वर्तमान में चुनौती के तहत है| दोनों ही आपराधिक याचिकाओं में अपीलार्थी गं.धो.जाँ.का. की और से श्री तुषार मेहता, फ़ाज़िल महा-सॉलिसिटर पेश हुए जबकि मूल रिट याचिकाकर्तागण को श्री कपिल सिब्बल, श्री मुकुल रोहतगी और श्री सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने प्रस्तुत किया| दोनों पक्षों ने लिखित प्रस्तुतियाँ दायर की है|

14. फ़ाज़िल महा-सॉलिसिटर ने *अन्य बातों के साथ* प्रस्तुत किया:

(क) 2013 अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, जाँच तब शुरू हुई जब वर्तमान मामला 2013 अधिनियम की धारा 212(1) के तहत गं.धो.जाँ.का को सौंपा गया और अधिनियम की धारा 212(12) के अनुसार जाँच तब समाप्त होगी जब गं.धो.जाँ.का द्वारा जाँच रिपोर्ट दायर की जाएगी| यह मानना गलत है कि दिनांक 20.06.2018 से तीन महीने पुरे होने पर जाँच का अधिदेश या गिरफ्तार करने की शक्ति समाप्त हो जाती है|

(ख) 2013 अधिनियम के धारा 212(3) के अंतर्गत "आदेश में दिए गए समय में रिपोर्ट केंद्र सरकार के समक्ष प्रस्तुत करना" पूर्ण रूप से निर्देशित है|

(ग) 2013 अधिनियम की धारा 212(8) के अंतर्गत निदेशक, अतिरिक्त निदेशक और सहायक निदेशक को मिली गिरफ़्तारी की शक्ति किसी समय सीमा से बाधित नहीं है और जब तक उप-धारा में दी गई शर्तों को पूरा किया जा रहा है तब तक गिरफ़्तारी की शक्ति पूर्ण रूप से प्रयोग होगी|

(घ) बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका दिल्ली उच्च न्यायालय में चलाने योग्य नहीं क्योंकि मूल रिट याचीगण न्यायिक मैजिस्ट्रेट, गुरुग्राम के समक्ष दिनांक 11.12.2018 को गिरफ़्तारी के बाद पेश हुए और न्यायिक आदेश के तहत हिरासत में भेजे गए| इसके बाद, उन्हें दिनांक 14.12.2018 को विशेष न्यायालय गुरुग्राम में पेश किया गया और विशेष न्यायालय, गुरुग्राम के न्यायिक आदेश के अंतर्गत पुनः हिरासत में भेज दिया गया|

(ङ) क्योंकि प्रमुख कंपनी का पंजीकृत कार्यालय गुरुग्राम में था, तो उनको गुरुग्राम के मैजिस्ट्रेट और विशेष न्यायालय के समक्ष पेश करना ठीक रहा| अगर बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका दायर होनी है तो पंजाब और हरियाणा न्यायालय में होगी ना कि दिल्ली उच्च न्यायालय में|

(च) बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका में जाँच का मुख्य बिंदु वापसी की तारीख होती है कार्यवाही का आरम्भ नहीं| वर्तमान मामले में, जब दिनांक 18.12.2018 को याचिकाओं पर सोच-विचार हुआ तो न सिर्फ केंद्र सरकार द्वारा पारित विस्तार आदेश दिनांकित 14.12.2018 मिला बल्कि गुरुग्राम के न्यायिक मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश दिनांकित 11.12.2018 और गुरुग्राम विशेष न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांकित 18.12.2018 और 14.12.2018 भी मिले|

15. वरिष्ठ अधिवक्तागण श्री सिब्बल, श्री रोहतगी और श्री लूथरा द्वारा मूल रिट याचीगण की तरफ से *अन्य बातों के साथ* पेश किया गया:-

(क) 2013 अधिनियम की धारा 212 के अंतर्गत एक विशेष क्षेत्राधिकार बनाया गया जिसके तहत किसी भी कंपनी के कॉर्पोरेट कार्यों की जाँच गं.धो.जाँ.का द्वारा की जा सकती है, जिसके दूरगामी परिणाम हो सकते है| इसी कारण से जाँच पूरी करने हेतु समय सीमा तय की जाती है और जाँच को एक अंतहीन कार्य बनाने से रोका जा सके| इसलिए, प्रथम आदेश में मिली समय सीमा को बारीकी से देखा जाए और कथित समय सीमा के अंत पर अधिदेश ख़त्म किया जाए| इसलिए, पहले आदेश में दी समय सीमा को बारीकी से देखा गया और कथित समय सीमा के अंत पर अधिदेश ख़त्म हो गया|

(ख) गं.धो.जाँ.का एक विशेष संस्थान है जिसका इस मामले से अतिरिक्त जाँच का क्षेत्राधिकार नहीं है, इसलिए, अधिदेश के मानदंडों में रहते हुए कार्य करे और कोई भी गिरफ़्तारी समय सीमा के बाद मान्य नहीं हो सकती|

(ग) कोई भी गिरफ़्तारी समय सीमा के बाद क्षेत्राधिकार से बाहर है और उच्च न्यायालय द्वारा वर्तमान मामले में दी गई राहत उचित है|

(घ) रिट याचिकाओं ने मुख्यतः गिरफ़्तारी आदेशों को क्षेत्राधिकार से बाहर होने की चुनौती दी और रिट याचिकाओं में सिर्फ चौथी प्रार्थना में ही बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी करने की बात कही गई|

(ङ) गं.धो.जाँ.का द्वारा जाँच के लिए आदेश नई दिल्ली में पारित हुआ, गं.धो.जाँ.का नई दिल्ली में स्थित है, गिरफ़्तारी आदेश भी नई दिल्ली में पारित हुआ, रिट याचीगण भी दिल्ली में गिरफ्तार हुए और गं.धो.जाँ.का कार्यालय की हिरासत में दिल्ली में थे और जैसे कि उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार रहा उसी तरह रिट याचिकाओं पर विचार कर राहत प्रदान की गई|

(च) आगे की जाँच के विस्तार के अभाव में, गिरफ़्तारी की शक्ति का प्रयोग 10.12.2018 को नहीं हो सकता था| कोई भी विस्तार प्रारंभिक गिरफ़्तारी को सत्यापित नहीं कर सकता| इस प्रकार की गिरफ़्तारी किसी उचित अधिदेश से असमर्थित है, जो कि अवैध कार्य है, जो अनुच्छेद 21 का उल्लंघन करता है|

16. वर्तमान मामले के मूल तथ्यों का संक्षेप इस प्रकार है:-

(क) गं.धो.जाँ.का को जाँच 20.06.2018 के आदेश द्वारा सौंपा गया| इस आदेश के अनुच्छेद 6 में यह अनुबंधित किया गया कि निरीक्षक अपनी जाँच पूरी करें और रिपोर्ट केन्द्रीय सरकार को तीन महीने के अन्दर पेश करें|

(ख) तीन महीने की अवधि 19.09.2018 को समाप्त हुई|

(ग) गं.धो.जाँ.का के निदेशक के समक्ष तीनों अभियुक्तों को गिरफ्तार करने का प्रस्ताव पेश हुआ और 2013 अधिनियम की धारा 212(8) के तहत आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित करने के पश्चात् निदेशक गं.धो.जाँ.का ने दिनांक 10.12.2018 को मंजूरी दी|

(घ) दिनांक 10.12.2018 को गिरफ़्तारी के पश्चात्, अभियुक्तों को न्यायिक मैजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया जिन्होंने अपने दिनांक 11.12.2018 के आदेश द्वारा अभियुक्तों को 14.12.2018 तक हिरासत में भेजा और उन्हें 14.12.2018 को विशेष न्यायालय में पेश होने का आदेश दिया|

(ङ) 13.12.2018 को गं.धो.जाँ.का द्वारा 57 मामलों व वर्तमान मामले की जाँच पूरी करने हेतु समय सीमा का विस्तार प्रस्ताव पेश किया गया|

(च) 14.12.2018 को ही गुरुग्राम विशेष न्यायालय ने अभियुक्त को दिनांक 18.12.2018 तक हिरासत में भेज दिया था|

(छ) उसी तिथि पर अर्थात 14.12.2018 को ही केन्द्रीय सरकार ने ग्रुप से सम्बंधित और विस्तरण से सम्बंधित विस्तार प्रस्ताव को 30.06.2019 को स्वीकृती दी|

(ज) 17.12.2018 को वर्तमान रिट याचिकाओं को वरीयता दी गई जो उच्च न्यायालय के समक्ष पहली बार 18.12.2018 को आई थी|

(झ) 18.12.2018 को ही अभियुक्तों को आगे 21.12.2018 तक पुलिस हिरासत में भेज दिया गया|

(ञ) 20.12.2018 को रिट याचिकाओं पर विचार हुआ और वर्तमान आवेदन के तहत आदेश पारित हुआ|

(ट) उक्त आदेश के अनुसार, मूल रिट याचीगण ज़मानत पर रिहा हुए|

इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय द्वारा पाया गया कि अंतरिम राहत पाने हेतु एक केस बनाया गया| इस मामले की मुख्य समस्या यह है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा याचिका पर विचार उचित व न्यायसंगत है और अपील के तहत आदेश पारित करना सही है?

17. इस पर विचार करने हेतु कि क्या रिट याचीगण किसी अंतरित राहत के हकदार थे, उच्च न्यायालय द्वारा अपने आदेश के अनुच्छेद 15 में दो सवाल पूछे गए| मामले को उक्त दोनों प्रश्नों के परिप्रेक्ष्य से विचारण से पूर्व, फ़ाज़िल महा-सॉलिसिटर द्वारा जिस समस्या पर ज़ोर दिया गया है उसे पहले संबोधित करना ज़रूरी है| यह उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया कि जो तारीख जिसके सन्दर्भ में निरोध को बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका की कार्यवाही से चुनौती दी जा सकती है वह वो तारीख है जिसमें कार्यवाही की वापसी दायर की गई है न कि कार्यवाही शुरू होने की| उन्होंनें फेडरल न्यायालय के निर्णय ***बसंता चंद्रा घोषे बनाम किंग एम्परर***[1] में दिए निर्णय पर विश्वास किया, जो इस प्रकार है: -

> "... ...अगर किसी समय न्यायालय द्वारा नज़रबंदी की रिहाई के निर्देश से पूर्व, हिरासत का मान्य आदेश प्रस्तुत होता है, तो

न्यायालय उसकी रिहाई का निर्देश सिर्फ इस आधार पर नहीं दे सकता कि शुरूआती पड़ाव में हिरासत का कोई वैध कारण नहीं था... ..."

इसी प्रकार के प्रश्न विचार हेतु ***नरंजन सिंह नथावन बनाम पंजाब राज्य[2], राम नारायण सिंह बनाम दिल्ली राज्य[3], ए.के. गोपालन बनाम भारत सरकार[4], प्रणव चैटर्जी बनाम बिहार राज्य व अन्य[5], तालिब हुसैन बनाम जम्मू कश्मीर राज्य[6], कर्नल डॉ. बी.रामाचंद्रन राव बनाम ओडिसा व अन्य[7]*** में आए| यह निर्णय ***कन्नू सान्याल बनाम ज़िला मैजिस्ट्रेट, दार्जिलिंग व अन्य[8]*** में विचारित हुए|

सन्दर्भ: आधार क व ख

4. यह दोनों आधार याचिकाकर्ता की ज़िला कारावास, दार्जिलिंग में शुरुआती नज़रबंदी की वैधता से सम्बंधित है| हमें लगता है इन्हें निर्णित करना अनावश्यक है| अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि सन्दर्भ के साथ सबसे शुरुआती तारीख़, जिसमें बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही को चुनौती दी गई है, की वैधता की जाँच की जा सकती है, जिस तिथि पर बंदी प्रत्यक्षीकरण के लिए आवेदन न्यायालय में किया जाता है| इस न्यायालय ने न्याया. वांछु (जैसा उन्होंनें तब कहा) द्वारा *ए.के. गोपालन बनाम भारत सरकार* में कहा कि:-

"यह पूर्णत स्थापित है कि न्यायालय बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका के निपटान के समय यह देखेगी कि क्या न्यायालय में आवेदन करने की तिथि पर हिरासत वैध है, अगर आवेदन की तिथि और सुनवाई की तिथि में कोई अन्य हस्तक्षेप नहीं हुआ है तो|"

इस न्यायालय के पूर्व दो निर्णयों में *नरंजन सिंह बनाम पंजाब राज्य*[2] और *राम नारायण सिंह बनाम दिल्ली राज्य*[3] में न्यायालय ने थोड़े अलग विचार व्यक्त किए और न्यायालय द्वारा *बी.आर राव बनाम ओड़िसा राज्य*[7] में विचार दोहराया जिसमें कहा गया (बिं. 259, अनुच्छेद 7):

"बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में न्यायालय की वैधता के अथवा फिर वापसी के समय पर निरुद्धता के सम्बन्ध में एवं कार्यवाही की प्रतिष्ठापन के सन्दर्भ में नहीं|""

और इस न्यायालय के अन्य निर्णय *तालिब हुसैन बनाम जम्मू कश्मीर राज्य*[6] में न्यायाधीश श्री दुआ, एकल न्यायाधीश ने अवकाशकाल में देखा कि (बिं. 121, अनुच्छेद 6) में:-

"बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में न्यायालय को सुनवाई की तिथि पर रोक की वैधता पर विचार करना होता है|"

अलग अलग समय पर न्यायालय द्वारा लिए गए इन तीन विचारों में, दूसरा विचार इंग्लैंड के कानून और अभ्यास के अनुरूप है और भारत में सबसे अधिक स्वीकृति का माप समझा जा सकता है| हालांकि, तीसरा विचार भी गलत मान रद्ध नहीं किया जा सकता, क्योंकि क्या बंदी प्रत्यक्षीकरण आवेदन की सुनवाई तिथि पर निरोध विधिक है या नहीं, इसकी पूछताछ उचित रहेगी| किसी कारणवश अगर रोक उस तिथि पर वैध है तो, न्यायालय उस व्यक्ति की रिहाई का आदेश नहीं दे सकती जो बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी कर निरुद्ध हो| परन्तु, वर्तमान मामले के उद्देश्य

> हेतु, यह अभौतिक है कि इन तीनों में से कौन सा विचार सही माना जाए, क्योंकि यह साफ़ है कि, जो भी सही विचार हो, रोक की वैधता के परिक्षण के सन्दर्भ में जल्द तारीख जिसके सन्दर्भ में निरुद्धता की वैधता का परिक्षण किया जाए बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका के दायर करने की तिथि है और न्यायाधीश श्री दुआ के *बी.आर राव बनाम ओड़िसा राज्य*[7] में, "कथित शब्द कि "न्यायालय कार्यवाही की शुरुआत से पूर्व किसी तिथि में बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका से सम्बंधित नहीं है|" अभी वर्तमान मामले में रिट याचिका जनवरी 6, 1973 को दायर हुई और उस तिथि पर याची विशाखापट्नम केन्द्रीय कारावास की हिरासत में था| याची की शुरूआती हिरासत, दार्जिलिंग ज़िला कारावास में रिट याचिका के दायर होने से पूर्व समाप्त हो चुकी थी| इसलिए, यह अनावश्यक है कि याची की ज़िला कारावास, दार्जिलिंग में हिरासत या वैधता का परीक्षण किया जाए| सिर्फ एक सवाल जो विचार योग्य है वह यह कि क्या याची की केन्द्रीय कारावास में हिरासत वैध है या नहीं| अगर हम यह मान भी लें कि आधार क और ख सही रूप से आधारित है और याची की दार्जिलिंग ज़िला कारावास में नज़रबंदी में अदढता थी तो भी याची की केन्द्रीय जेल विशाखापट्नम केन्द्रीय कारावास में आगामी नज़रबंदी को अमान्य नहीं कर सकती| *बी.आर. राव बनाम ओड़िसा राज्य* में न्यायालय के निर्णय के अनुच्छेद 7 को देखें| विशाखापट्नम केन्द्रीय कारावास में याची की नज़रबंदी की वैधता उनके गुणागुण पर तय होगी| इसलिए, हम आधार 'क' और 'ख' पर विचार-विमर्श अनावश्यक मानते हैं और उन पर निर्णय इंकार करते है|""

इस प्रकार कानून साफ़ है कि "बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में न्यायालय को वैधता या वापसी के समय नज़रबंदी के संबंध में विचार करना होता है ना कि कार्यवाही के प्रतिष्ठापन के सन्दर्भ में|" ***कन्नू सान्याल***[8] में याची की दार्जिलिंग ज़िला कारावास में नज़रबंदी की वैधता इस न्यायालय द्वारा विचारित नहीं है और यह देखा गया कि याची की ज़िला कारावास दार्जिलिंग में नज़रबंदी में अदढता याची की विशाखापट्नम केन्द्रीय कारावास में आगामी नज़रबंदी अमान्य नहीं है|

18. इस चरण पर, हमें इस न्यायालय द्वारा निर्णित तीन मामलों से निपटान करना होगा:-

(क) ***मन्नु भाई रतिलाल पटेल द्वारा उषाबेन बनाम गुजरात राज्य व अन्य***[9] में इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने पिछले निर्णयों के बिन्दुओं में इस मामले के सन्दर्भ में विचार किया| वह एक समस्या से भी जूंझे कि क्या न्यायिक मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका पर विचार हो सकता है| इस न्यायालय की राय अनुच्छेद 20 से 24 और अनुच्छेद 31 इस प्रकार से है:

> **20.** यह कहने के बाद, ***कन्नू सान्याल मामले***[8] में न्यायपीठ ने विचार दिया कि इस मामले के न्यायनिर्णय में, यह मानना बेकार है कि तीनों विचारों में से कौन सही है व अंत में **बी. रामचंद्रा राव**[7] के अनुच्छेद 7 से संदर्भित न्यायालय ने इस प्रकार विचार दिया कि: (एस.सी.सी. बिं. 259)
>
> "7. ... बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में न्यायालय को वैधता या वापसी के समय नज़रबंदी से सम्बंधित हो और कार्यवाही के प्रतिष्ठापन से सम्बंधित ना हो|"

अंत में न्यायपीठ ने निर्णय दिया कि: (*कन्नू सान्याल मामले*[6], एस.सी.सी. बिं. 148, अनुच्छेद 5)

"5. ... इसलिए याची की विशेष न्यायाधीश, विशाखापट्नम के समक्ष प्रस्तुतिकरण अवैध नहीं माना जा सकती| और उसकी आगामी नज़रबंदी विशाखापट्नम केन्द्रीय कारावास में जो कि विशेष न्यायाधीश विशाखापट्नम के आदेश अनुसार वैध करने हेतु लंबित कार्यवाही होनी चाहिए| इस न्यायालय ने ***कर्नल.बी. रामचंद्रा राव बनाम ओड़िसा राज्य***[7] में इंगित किया कि बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी नहीं की जा सकती|

'जहाँ एक व्यक्ति को कारावास की हिरासत में सक्षम न्यायालय द्वारा दिए आदेश में मिला जो प्रथमदृष्ट्या में क्षेत्राधिकार से बाहर व पूर्णतः अवैध नहीं है'|"

21. कन्नू सान्याल[8] के दिए सिद्धांत, इस प्रकार है कि शुरूआती पड़ाव पर याची की नज़रबंदी में अहटता उसकी आगामी नज़रबंदी को अवैध नहीं कर सकती व उसका निर्णय उसके गुणागुणों पर होगा|

22. इस बिंदु पर, हम सफलतापूर्वक स्थापना बैंच के ***संजय दत्त बनाम राज्य, सीबीआई द्वारा, बॉम्बे(II)***[10] के दिए निर्णय में विचार दिया कि (एस.सी.सी. बिं. 442, अनुच्छेद 48)

"48. ...स्थापना बैंच के निर्णय द्वारा यह फैसला हुआ कि बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट के लिए दायर याचिका, अभियुक्त के निरोध अथवा रिमांड की अनुपस्थिति के आधार पर बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका को खारिज़ करना पड़ेगा, यदि निर्णय की वापसी की तिथि पर हिरासत अथवा निरोध वैध आधार पर हो|"

23. उपरोक्त दी गई अवधारणाओं को बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका के सन्दर्भ में रखते हुए, खासकर अभियुक्त के प्रस्तुतिकरण के समय पर फ़ाज़िल मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश से सम्बंधित, रिमांड सम्बंधित, संहिता के तहत योजनाबद्ध बिन्दुओं को निर्देशित करना आवश्यक है| संहिता के तहत रिमांड के दो प्रावधान है अर्थात् धारा 167 और 309| संहिता की धारा 167(2) के तहत मैजिस्ट्रेट को अभियुक्त की हिरासत अर्थात् पुलिस या न्यायिक नज़रबंदी का निर्देश देने का प्राधिकार है अगर उन्हें आगे नज़रबंदी आवश्यक प्रतीत होती है|

24. अभियुक्त की रिमांड का निर्देश मूल्यत: एक न्यायिक कार्य है| अभियुक्त की नज़रबंदी के आदेश निर्देशित करते हुए मैजिस्ट्रेट कार्यकारी क्षमता में नहीं होते| यह न्यायिक कृत्य करते समय, मैजिस्ट्रेट की ओर से यह आवश्यक है कि वह सुनिश्चित करे कि उनके समक्ष प्रस्तुत सामानों से रिमांड का औचित्य साबित हो रहा है या और किसी तरह से कहें तो, क्या अभियुक्त को हिरासत में रखने व रिमांड बढ़ाने का कोई उचित आधार है| धारा 167 के तहत रिमांड का उद्देश्य है कि जाँच 24 घंटे में पूरी नहीं की जा सकती| यह मैजिस्ट्रेट को रिमांड की आवश्यकता बतलाता है| यह आवश्यक है कि जाँच एजेंसी रिमांड रिपोर्ट के साथ केस डायरी भेजें ताकि मैजिस्ट्रेट तथ्यात्मक परिदृश्य को सराह के अपना मस्तिष्क लगाए कि क्या पुलिस रिमांड का वारंट या न्यायिक रिमांड का औचित्य या रिमांड की कोई आवश्यकता नहीं है| मैजिस्ट्रेट की ओर से यह आवश्यक है कि वह अपना मस्तिष्क लगाए और स्वतः या यांत्रिक तरीके से रिमांड आदेश पारित ना करें|

....

31. वर्तमान मामले में, यह साबित करने लायक है कि गिरफ्तारी अवरोध/रोक आदेश पारित होने के एक दिन पहले हो गई थी| यह ज़ाहिर है कि फ़ाज़िल मैजिस्ट्रेट द्वारा प्राथमिकी में दिए आरोपों के आधार पर रिमांड आदेश पारित किया गया, ना कि सामान्य या यांत्रिक रूप| इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि उच्च न्यायालय की जाँच पर रोक का प्रभाव सिर्फ एजेंसी के कार्य पर पड़ेगा| रिमांड आदेश जो कि न्यायिक कार्य है, हमारे विचार में किसी अदृढ़ता से पीड़ित नहीं है| केवल एक ही आधार जो उच्च न्यायालय और इस न्यायालय के समक्ष उभारा गया है वह यह है कि एक बार जाँच पर रोक, रिमांड आदेश पर अति संवेदनशील रहेगी और इसलिए तार्किक परिणामस्वरूप, नज़रबंदी उचित नहीं होगी| यह ध्यान देने योग्य है कि जाँच पहले ही शुरू हो गई थी और परिणामस्वरूप, अभियुक्त गिरफ्तार किया जा चुका था| इसलिए, हम यह विचार करने हेतु बाध्य है कि रिमांड आदेश क़ानून के अनुसार अस्थिर नहीं माना जा सकता| यह एक मान्य सिद्धांत है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका तब नहीं सुनी जाता जब सक्षम न्यायालय द्वारा व्यक्ति को न्यायिक या पुलिस हिरासत में रखा जाए उस आदेश से जो प्रथमदृष्ट्या में क्षेत्राधिकार से बाहर या पूरी तरह से यांत्रिक या अवैध रूप से पारित किया गया हो| जैसा कि *बी. रामचंद्रा राव*[8] और *कन्नू सान्याल*[9] में कहा गया है कि, न्यायालय को नज़रबंदी का आदेश या वैधता की छानबीन करनी आवश्यक है| जब तक न्यायालय सुनिश्चित न कर ले कि व्यक्ति को जिस आदेश के अनुसार कारावास की हिरासत में रखा गया वह क्षेत्राधिकार से बाहर और पूर्ण रूप से अवैध है, बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका नहीं दी जा सकती| यह नोट करना उचित है कि इस न्यायालय के विभिन्न प्राधिकार द्वारा निपटाई गई जाँच ना तो पूछताछ है और ना ही परीक्षण| यह पुलिस के जाँच करने के अनन्य डोमेन में है और मैजिस्ट्रेट के किसी भी नियंत्रण से स्वतंत्र है| गतिविधि का क्षेत्र स्पष्ट और सीमांकित है| इस प्रकार देखा गया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश जिसमें बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका देने से इंकार इस आधार पर किया गया कि मैजिस्ट्रेट द्वारा दिए गए न्यायिक आदेश जो आरोपित को हिरासत में रखे वह कानूनी रूप में वैध है, हमारी नज़र में त्रुटिमुक्त है|"

ख). ***सौरभ कुमार बनाम जेलर, कोनाएला कारावास व अन्य***[11] **में** अग्रणी निर्णय के अनुच्छेद 13 में मुद्दा निपटाया गया"-

13. तथ्यों के उक्त प्रकथन से साफ है कि याची न्यायिक हिरासत में न्यायिक मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश के कारण है| यही बात मूल अभिलेख से फिर सुनिश्चित हुई जो इस न्यायालय में अपने आदेश दिनांकित 09.04.2014 में, अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, दलसिंहसराय, ज़िला समस्तीपुर, बिहार के न्यायालय से मँगाया गया| इसलिए, याची के फ़ाज़िल अधिवक्ताओं का तर्क कि, बिना किसी मामले के अवैध निरोध था, पर विवाद गलत है| इसलिए, अभियुक्त द्वारा माँगी गई राहत नहीं दी जा सकती| जबकि उपरोक्त कथित तथ्यों के विचार से रिट याचिका में कई अनेक मुद्दे उठाए गए, जिन पर विचार करना अनावश्यक है| हालाँकि, याची को आज़ादी है कि वह अपने 2013 के आपराधिक केस सं. 129 जो फ़ाज़िल अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मैजिस्ट्रेट दलसिंहसराय की न्यायालय में विचाराधीन है में आवेदन कर सकते है|"

ठाकुर, न्या.(मुख्य न्यायाधीश जब थे) जो रमन्ना, न्याया. द्वारा दिए निर्णय से सहमत थे उन्होंनें भी मामले से निपटान अनुच्छेद 22 में सुविचारित राय इस प्रकार है:

> **"22.** उपरोक्त स्थिति में एकल सवाल जिससे हम चिंतित है कि क्या याची कहने को अवैध हिरासत में है| हमारा उत्तर इस प्रश्न हेतु नकारात्मक है| जिन अभिलेख को हमने इस्तेमाल किया है वह दर्शाते है कि याची एक अभियुक्त है जो अपने अपराधों के लिए सज़ा पा रहा है, जिसमें संज्ञान सक्षम न्यायालय द्वारा लिया जा चुका है| वह वर्तमान में न्यायालय के रिमांड आदेश के अनुसार हिरासत में है| बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका, इस स्थिति में पूरी तरह गलत है| यह कहने के बाद, हमारा विचार है कि याची वास्तव में ज़मानत हेतु आवेदन दायर कर सकता है या निश्चित रूप से की होगी जो न्यायालय द्वारा मंज़ूर हो सकती है, जो कि याची और परिस्थितियों द्वारा किए अपराध की प्रकृति के सन्दर्भ में है| याची ने ना जाने किन कारणों से यह करना नहीं चुना है| इसके बजाय, उसे सलाह दी गई है कि वर्तमान याचिका इस न्यायालय में दायर करें जो उसकी हिरासत की वृद्धि का कोई विकल्प नहीं है|"

ग). इस न्यायालय की तीन फ़ाज़िल न्यायाधीशों की बेंच ने ***महाराष्ट्र राज्य बनाम तसनिम रिजवान सिद्दीकी***[2] में इसके तहत निष्कर्ष दिया कि:-

> **"10.** यह प्रश्न कि एक व्यक्ति जो क्षेत्राधिकारित मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड आदेश के तहत जाँच अधीन अपराध हिरासत में है, क्या हैबियस कॉर्पस रिट पा सकता है, इस मुद्दे पर विचार *सौरभ कुमार बनाम जेलर, कोनेला कारावास*[1] और *मनुभाई रतिलाल पटेल*[9] *बनाम गुजरात राज्य* में किया गया है| यह अब अनिर्णीत विषय नहीं है| वर्तमान मामले में, जब बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी करने हेतु प्रत्यर्थी द्वारा रिट याचिका 18.03.2018/19.03.2018 को दायर की गई और 21.03.2018 को उच्च न्यायालय द्वारा निर्णित हुआ कि उसके पति रिज़वान आलम सिद्दीकी को मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश अनुसार प्राथमिकी सं.I-31 दिनांकित 17.03.2018 से सम्बंधित 23.03.2018 को पुलिस रिमांड में अभयस्त किया| आगे, बिना मैजिस्ट्रेट के आदेश को चुनौती दिए, बंदी प्रत्यक्षीकरण तक सीमित रिट याचिका दायर की गई| मामले को उस दृष्टिकोण से देखने पर, यह मामला लगातार अवैध नज़रबंदी का नहीं था परन्तु पदधारी को न्यायिक हिरासत में न्यायिक मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश के कारण रखा गया था, जो आपराधिक मामले में जाँच के दौरान पुलिस रिमांड प्रदान करता था|
>
> **11.** आक्षेपित निर्णय में दिए तीखे अवलोकनों की प्रार्थना के जवाब में खासकर अनुच्छेद 4-6 में पहले पेश किया गया कि उक्त अवलोकन पूरी तरह से अनुचित थे क्योंकि सम्बंधित पुलिस उपायुक्त जो न्यायालय में उपस्थित थे, रिज़वान आलम सिद्दीकी की मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित न्यायिक आदेश से छूट दिला कर रिहाई नहीं करवा पाए जो पुलिस हिरासत निर्देशित करते हुए मैजिस्ट्रेट द्वारा पारित न्यायिक आदेश दिनांक 23.03.2018 तक थे| इसके अतिरिक्त, यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय बिना कोई अवसर दिए, अवलोकन बनाने आगे बढ़ गई, जो कि शपथ पत्र के तथ्यात्मक स्थिति को पुलिस अधिकारियों को समझाने से सम्बंधित रिट याचिका 18.03.2018 /19.03.2018 को दायर हुई और दिनांक 20.03.2018 को जब न्यायालय ने अपीलार्थी के अधिवक्ता को अगले दिन दिनांक 21.03.2018 को रिपोर्ट प्रस्तुत करने हेतु

बुलाया था| आक्षेपित आदेश दिनांक 21.03.2018 को पारित हुआ, जो दिनांक 23.03.2018 तक संचालित होने वाले न्यायिक रिमांड आदेश के साथ सहमती नहीं रखता| हमारे विचार में, उच्च न्यायालय को पुलिस उपायुक्त की ओर से की गई प्रस्तुतियाँ कि प्रत्यर्थी के पति को न्यायालय के निर्देश पर बरी किया जा सकता है, इस बात का साया नहीं लेना चाहिए| उपरोक्त अनुसार, पु.उपा. को ऐसी प्रस्तुति करने के अलावा कोई और विकल्प नहीं था| क्योंकि वह इस अभियुक्त को जिसे वह न्यायिक आदेश के तहत पुलिस हिरासत में रख रहे थे, उसे स्वेच्छा से बरी नहीं कर सकते| उच्च न्यायालय को जाँच अधिकारी के विरुद्ध तीखे अवलोकन नहीं बनाने चाहिए थे, बिना उन्हें अपने सफ़ाई शपथ-पत्र द्वारा प्रस्तुत किए|

12. ध्यान देने योग्य है कि क्योंकि वर्तमान मामले के तथ्यों की परिस्थिति को ध्यान रख बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका जारी नहीं की जा सकती, उच्च न्यायालय को गिरफ़्तारी के फायदों पर ध्यान देने के अनिच्छुक है जो मैजिस्ट्रेट द्वारा दिनांक 23.03.18 के पुलिस हिरासत की मंज़ूरी प्रदान करने के न्यायिक आदेश को चुनौती देने की अनुपस्थिति में गिरफ्तारी के गुणों तक पुलिस हिरासत प्रदान करने के अभाव के हुआ और खासकर के उन कारणों की वजह से जो मैजिस्ट्रेट के आदेश में उल्लेखित है| कुछ इसी तरह की स्थिति में, इस न्यायालय ने **पुलिस निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत राज्य व अन्य बनाम एन.एम.टी. जॉय इमैक्युलेट**[13] में, जाँच अधिकारी व उसकी जाँच उपेक्षाजनक और जटिल टिपण्ण को नामंजूर किया| तदानुसार, हमें वर्तमान मामले के तथ्यों में सम्बंधित पुलिस अधिकारियों के खिलाफ लगाए गए निर्णय के अनुच्छेद 4 से 6 में की गई टिप्पणियों को उजागर करने में कोई हिचक नहीं है|

19. अभियुक्त की रिमांड निर्देशित करने के कार्य को न्यायिक प्रक्रिया कहा माना जाता है एवं रिमांड आदेश को चुनौती पर बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका में विचार नहीं किया जाता | उच्च न्यायालय के द्वारा उठाया गया पहला प्रश्न का उत्तर माना जाता है | वर्तमान मामले में, उस तारीख़ पर जब मामले को उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया था एवं आदेश पारित किया गया था तब न केवल न्यायिक मजिस्ट्रेट के एवं विशेष न्यायालय ,गुरुग्राम के द्वारा पारित रिमांड आदेश थे बल्कि केन्द्रीय सरकार के द्वारा दिनांक 14.12.2018 के द्वारा पारित विस्त्ररण आदेश भी थे| मूल याचिकाकर्ता आदेश या रिमांड की विधिमान्यता, वैधता व शुद्धता को उचित कार्यवाही दायर कर चुनौती दे सकते थे | मगर उन्होंने ऐसी कोई चुनौती सक्षम अपील या पुनरीक्षण फोरम के सामने नहीं रखी | रिमांड के आदेश पारित करने वाले न्यायिक मजिस्ट्रेट और विशेष न्यायालय, गुरुग्राम द्वारा मामले की गुणवत्ता का निपटारा किया और देखा यदि अभियुक्त की नज़रबंदी न्यायोचित है या नहीं| गुणवत्ता के आधार पर सुसंगत मुद्दों की जाँच करने पर अभियुक्तों को आगे की पुलिस हिरासत के लिए रिमांड दे दी गयी | इन आदेशों को उच्च न्यायालय में चुनौती नहीं दी गई थी| इसलिए इन आदेशों

की सत्यता के सम्बन्ध में दी गई चुनौती पर संज्ञान करने का विकल्प उच्च न्यायालय के लिए मौजूद नहीं था मगर उच्च न्यायालय ने इस मामले को प्रारंभिक गिरफ्तारी के ही आदेश की वैधता होने या ना होने के दृष्टिकोण से परखा और पाया की रिमांड के आदेश द्वारा वैधता को नहीं दी जा सकती | मुख्य रूप से उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया गया मुद्दा था कि जाँच की अवधि के समाप्त होने के बाद भी गिरफ्तारी की जा सकती है जैसा कि 20.06.2018 के उक्त आदेश में निर्धारित था| |अगला मुद्दा समय के विस्तारण का था जिसकी स्वीकृति 14.12.2018 को दी गई थी| यह सच है की गिरफ्तारी अवधि की समाप्ति के बाद हुई थी पर जब तक उच्च न्यायालय ने याचिका पर संज्ञान किया, तब तक केन्द्रीय सरकार द्वारा 14.12.2018 को विस्तारण का आदेश पारित हो चुका था| इसके साथ ही न्यायिक मजिस्ट्रेट व विशेष अदालत, गुरुग्राम द्वारा न्यायिक आदेश पारित हो चुके थे, जिसने की अभियुक्त को हिरासती रिमांड दिला दी थी | यदि हम पूरी तरह से इस न्यायालय द्वारा बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका के सम्बन्ध में अधिकारिकता के प्रयोग के सम्बन्ध में निर्धारित क़ानून के हिसाब से चलें जो कि है, उच्च न्यायालय द्वारा याचिका पर संज्ञान करना और आदेश पारित करना न्यायोचित नहीं था |

20. हालाँकि हमें मूल रिट याचिकाकर्ताओं की ओर से पहले से दी गई प्रस्तुति से निपटारा करना चाहिए कि बंदी प्रत्यक्षीकरण के सम्बन्ध में रियायत की प्रार्थना दूसरे दर्जे की थी, जबकि सैद्धांतिक प्रस्तुतियों का सम्बन्ध याचिका की पहली तीन प्रार्थनाओं से था | प्रस्तुत किया था कि अवधि कि समाप्ति के साथ ही पूरा अधिदेश खत्म हो गया और तभी कोई गिरफ्तारी नहीं हो सकती थी और इस सिलसिले में अवैधता बनी रहेगी चाहे यदि विस्तारी का आगे कोई आदेश भी जारी किया गया हो | रिट याचिकाकर्ताओं के फ़ाज़िल अधिवक्ताओं कि प्रस्तुति के अनुसार इस प्रकार कि विस्तारिता अंतनिर्हित दोष को ठीक नहीं कर सकती और इसलिए उच्च न्यायालय का याचिका पर संज्ञान करना उचित था |हम उक्त पैराग्राफ 15 में उच्च न्यायालय द्वारा प्रस्तुत दूसरे प्रश्न पर विचार करने के बाद इस मुद्दे से निपट सकते हैं|

21. दिनांक 20.06.2018 के पहले आदेश में ही संकेत दिया गया है कि मूल कंपनी का पंजीकृत कार्यालय हरियाणा के गुरुग्राम में था। 2013 के अधिनियम की धारा 435 में अपराधों के शीघ्र सुनवाई के लिए विशेष न्यायालयों की स्थापना करने पर विचार किया गया है। धारा 436 में प्रावधान किया गया है कि *"धारा 435 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट सभी अपराध सिर्फ़ उन्हीं विशेष*

न्यायालय में विचारणीय होंगे जिनकी स्थापना या नियुक्ति उस क्षेत्र में है, जिसमें उस कंपनी का पंजीकृत कार्यालय है जिसका सम्बन्ध में अपराध किया गया है... /' गिरफ्तारी के तुरंत बाद, आरोपियों को 11.12.2018 को न्यायिक मजिस्ट्रेट, गुरुग्राम के समक्ष पेश किया गया, जिन्होंने उन्हें 14.12.2018 तक हिरासती रिमांड में भेज दिया और निदेश दिया कि उन्हें 14.12.2018 को विशेष अदालत, गुरुग्राम के समक्ष पेश किया जाए। तदनुसार, अभियुक्तों को विशेष न्यायालय, गुरुग्राम के समक्ष पेश किया गया, जिसने उसके बाद पहले उन्हें 18.12.2018 तक और फिर 21.12.2018 तक हिरासती रिमांड में भेज दिया। गुरुग्राम के विशेष न्यायालय धारा 436 के अंतर्गत इस मामले से निपटने के लिए सक्षम होती। लेकिन रिट याचिकाकर्ताओं के फाज़िल अधिवक्ताओं के अनुसार क्योंकि आरोपियों को दिल्ली में गिरफ्तार किया गया था और उन्हें दिल्ली में हिरासत में रखा गया और एसएफआईओ कार्यालय दिल्ली में है इसलिए दिल्ली उच्च न्यायालय रिट याचिकाओं पर संज्ञान और विचार करने के लिए सक्षम है और इसलिए उसे रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा चुना गया। **नवीनचंद्र एन. मजीठिया बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[14] के मामले में उन्होंने इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा रखा |

22. **नवीनचंद्र मजीठिया**[14] में, दलों के बीच सभी लेन-देन बंबई उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में हुआ | हालाँकि, याचिकाकर्ता के खिलाफ शिलांग में शिकायत दर्ज की गई थी, जिसके चलते जाँच शिलांग पुलिस द्वारा की गई। यह कहा गया कि इस तरह की जाँच पूरी तरह से गलत और अनुचित थी और बंबई के उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की गई ताकि शिलांग में दायर शिकायत को रद्द किया जा सके या उसके विकल्प में मुंबई पुलिस की किसी उपयुक्त जाँच अभिकरण को जाँच स्थानांतरित हो सके। निर्णय के पैरा 29 से पता चलता है कि मामले के विचित्र तथ्यों की स्थिति में, इस अदालत ने निदेश दिया कि शिलांग में दर्ज शिकायतों के संबंध में आगे की जाँच मुंबई पुलिस द्वारा की जाए। न्यायाधीश थॉमस, जो न्यायाधीश डी.पी. महापात्र द्वारा लिखित अग्रनिर्णय से सहमत थे, ने निम्नानुसार अपनी सहमति राय दी:

> "44. मौजूदा मामले में, एक बड़ी संख्या में घटनाएँ बम्बई में हुई हैं, जिनका सम्बन्ध शिलांग में दर्ज एफ.आई.आर. में निहित अभियोगों से है| यदि रिट याचिका में दिए गए प्राख्यान सही हैं तो तथ्यों के बड़े हिस्से ने, जिसके कारण एफआईआर दर्ज़ हुई, बम्बई में स्थान लिया था| उन घटनाओं का फिर पुनर्कथन अनावश्यक है जब मोहपात्रा, ज. ने उनका सटीकता और आवश्यक विवरण के साथ उल्लेख किया है|"

> 45. पूर्वकथित स्थिति में यह मानना लगभग असंभव है कि वाद हेतुक का कोई भी हिस्सा बम्बई में उत्पन्न नहीं हुआ है, जिस कारण याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका पर संज्ञान करने के पूर्ण क्षेत्राधिकार से बम्बई उच्च न्यायालय को वंचित किया जा सके| यहाँ तक कि ये ही तथ्य कि एफ.आई.आर. में दर्ज केस कि जाँच का ज्यादातर हिस्सा बम्बई में ही कराया जाना है, दर्शाता है कि वाद हेतुक बम्बई उच्च न्यायालय की क्षेत्रिक सीमाओं से बाहर नहीं जा सकता|

23. **दशरथ रूपसिंह राठौड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[15] में, इस न्यायालय के तीन फाज़िल न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ को पराक्रम्य लिखत अधिनियम, 1881 और के अधीन आपराधिक शिकायतों के संबंध में न्यायालयों के क्षेत्रीय अधिकारिता के सवालों पर विचार करने के लिए गठित किया गया था एवं निर्णय के पैरा 13 में **नवीनचंद्र एन. मजीठिया**[14] में पूर्व निर्णय को नोट किया और निम्नानुसार टिप्पणी की:

> "13. हम उन संभावित असंगतियों के बारे में सचेत हैं जो कि नागरिक कानून से सम्बंधित निर्णयों को अपराधिक कानून में उपयोजित करने में फंसी हुई हैं, जिसमें कि नागरिक कानून की "वाद हेतुक" कि अवधारणा का अपराधिक कानून में ग्रहण करना भी शामिल है, जिसमें कि अनिवार्य रूप से उस जगह की परिकल्पना है जहाँ अपराध किया गया है, उस जगह के न्यायालय को क्षेत्राधिकार से सशक्त करती है| *नवीनचंद्र एन मजीठिया बनाम महाराष्ट्र राज्य*[14] में इस न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 (2) के अधीन उच्च न्यायालयों की शक्तियों पर विचार करना था। उसमें मौजूद वाक्यांश "वाद हेतुक" पर विचार करते हुए यह स्पष्ट किया गया कि क्योंकि शिकायत में उल्लेखित अभिकथित अपराध की जाँच कि कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं ने मुंबई में स्थान लिया है और विशेषतः क्योंकि मौलिक शिकायत शिलांग में दर्ज शिकायत का गलत होना था तो बम्बई उच्च न्यायालय को रिट क्षेत्राधिकार निर्विवादित रूप से उपलब्ध था| "वाद हेतुक" की अवधारणा के अपराधिक व्यवस्था में निषेचन ने और अधिक उलझन पैदा कर दी है जो की उच्च न्यायलयों द्वारा स्वीकार कर ली गयी है | हमें ऐसा प्रतीत होता है कि *"के भास्करन बनाम संकरन वैद्यान वैद्यन बालान और अन्य*[16]*"* ने शिकायतकर्ता को कई मौके प्रदान किये हैं, जो कि इस न्यायालय के कानून को सुगम करने कि इच्छा के प्रतिकूल है| न्यायालयों को आदेशित है कि वह कानून कि इस प्रकार व्याख्या करे कि उसकी अस्पष्टता और संदिग्धता को मिटाया जा सके और ये सुनिश्चित किया जाए कि क़ानूनी कार्यवाही का इस्तेमाल प्रताड़ना के साधन के तौर पर ना किया जाए| चाहे वो कानून के किसी स्पष्ट रूप से उल्लंघन करने वाले का ही क्यों न हो | कानून का प्रयास अपराधियों को दंड देना और पीड़ित पक्ष को सहायता प्रदान करना है न कि अपराधियों को तंग करने वाली कार्यवाही से प्रताड़ित करना | इसलिए सटीकता और निश्चितता आवश्यक है, विशेषकर जहां मुकदमें के स्थान का सवाल है"|

24. यह सच है कि **दशरथ रूपसिंह राठौड़**[15] में लिया गया निर्णय परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन आपराधिक शिकायत के संदर्भ में था एवं रिट याचिका के चल सकने के मुद्दे से निपटने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन नहीं था इसलिए यह नहीं कहा जा

सकता की मौजूदा मामले में उच्च न्यायालय के पास याचिका पर संज्ञान करने का पूरी तरह से क्षेत्राधिकार नहीं था। हालांकि, क्योंकि न्यायिक मजिस्ट्रेट और विशेष न्यायालय गुरुग्राम द्वारा पारित रिमांड आदेशों के अनुसरण हेतु नज़रबंदी के संबंध में चुनौती थी अत: हमारी सुविचारित राय है कि उच्च न्यायालय को इस चुनौती पर संज्ञान नहीं करना चाहिए था। यदि रिमांड का निदेशन मूलतः एक न्यायिक कार्य है, तो ऐसे आदेशों की शुद्धता या वैधता कि परख यदि करनी ही हो तो उसे किसी अपीलीय या पुनरीक्षण मंच के समक्ष उचित रूप से स्थापित की गई कार्यवाही के रूप में किया जा सकता है। यहाँ तक कि ऐसी परिस्थितियों में भी जहाँ गिरफ्तारी उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में ही हुई हो, क्योंकि 2013 के अधिनियम की धारा 435, 436 के अनुपालन में अभियुक्तों को एक सक्षम अदालत के समक्ष पेश किया गया था, उच्च न्यायालय को रिट याचिका स्वीकार नहीं करनी चाहिए थी। फिर भी, क्योंकी उच्च न्यायालय ने इस मामले पर इस दृष्टि से विचार किया कि गिरफ्तारी का प्रारंभिक आदेश मान्य था भी या नहीं और फिर पाया कि इस तरह कि अवैधता को आगे के रिमांड आदेश द्वारा वैध नहीं ठहराया जा सकता है, हम उस प्रश्न से अब निपट सकते हैं।

25. शुरुआत में हम सुसंगत कानूनी प्रावधान उद्धृत करते हैं।

क) 2013 अधिनियम की धारा 211 और 212 इस प्रकार हैं: -

> "**211 गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय की स्थापना-**(1)केंद्रीय सरकार, किसी कंपनी से सम्बंधित धोखाधड़ी की जाँच करने के लिए अधिसूचना द्वारा गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के नाम से ज्ञात एक कार्यालय की स्थापना करेगी:
>
> परन्तु जब तक उपधारा (1) के अधीन धोखाधड़ी जाँच कार्यालय स्थापित नहीं किया जाता है, तब तक भारत सरकार के संकल्प सं. 45011/16/2003- प्रशा.-I, तारीख 2 जुलाई, 2003 के निबंधनों में केंद्रीय सरकार द्वारा स्थापित गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को इस धारा के प्रयोजनों के लिए गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय समझा जाएगा|
>
> (2) गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय का प्रमुख एक निदेशक होगा और केंद्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जाने वाले ऐसे व्यक्तियों में से निम्नलिखित क्षेत्रों के विशेषज्ञों की ऐसी संख्याओं से मिलकर बनेगा, जो निम्नलिखित क्षेत्र में योग्यता, सत्यनिष्ठा और अनुभव रखते हों,-
>
> (i) बैंककारी;
> (ii) कॉरपोरेट कार्य;
> (iii) कराधान;
> (iv) न्यायालयिक संपरीक्षा;
> (v) पूँजी बाज़ार;

(vi) सूचना प्रौद्योगिकी;
(vii) विधि; या
(viii) ऐसे अन्य क्षेत्र जो विहित किये जाएं |

(3) केंद्रीय सरकार, गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय में अधिसूचना द्वारा कॉरपोरेट कार्य में सम्बंधित विषयों में ज्ञान और अनुभव रखने वाले ऐसे निदेशक को नियुक्त करेगी जो भारत सरकार में संयुक्त सचिव से नीचे की पंक्ति का अधिकारी नहीं होगा |

(4) केंद्रीय सरकार गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के ऐसे विशेषज्ञ और अन्य अधिकारी और कर्मचारी नियुक्त कर सकेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों के दक्ष निर्वहन के लिए आवश्यक समझे|

(5) गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के निदेशक, विशेषज्ञों और अन्य अधिकारियों तथा कर्मचारियों के निबंधन और सेवा शर्तें ऐसी होंगी जो विहित की जाएँ|

212 गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय द्वारा कंपनी के कार्यों का अन्वेषण-
(1) धारा 210 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जहाँ केंद्रीय सरकार की राय है कि गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय द्वारा कंपनी के कार्यों का अन्वेषण करना आवश्यक है, वहाँ-

(क) धारा 208 के अधीन रजिस्ट्रार या निरीक्षक की रिपोर्ट प्राप्त होने पर;
(ख) कंपनी द्वारा पारित विशेष संकल्प की संसूचना पर कि कंपनी के क्रियाकलापों का अन्वेषण किया जाना अपेक्षित है;
(ग) लोकहित में, या
(घ) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के किसी विभाग से अनुरोध पर;

केन्द्रीय सरकार आदेश स्वर उक्त कंपनी के क्रियाकलापों के अन्वेषण को गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को सौंप सकेगी और इसका निदेशक ऐसी संख्या में निरीक्षकों को अभिहित कर सकेगा जो वह अन्वेषण के प्रयोजन के लिए आवश्यक समझें |

(2) जहाँ कोई मामला केन्द्रीय सरकार द्वारा इस अधिनियम के अधीन के अन्वेषण के लिए गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को सौंपा गया है, वहाँ केंद्रीय सरकार या कोई राज्य सरकार का कोई अन्य अन्वेषण अभिकरण इस अधिनियम के लिए कपट अन्वेषण कार्यालय को सौंपा गया है, वहाँ केंद्रीय सरकार या कोई राज्य सरकार का कोई अन्य अन्वेषण अभिकरण इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध की बाबत ऐसे मामले पर अन्वेषण की कार्यवाही नहीं करेगा और यदि ऐसा अन्वेषण पहले से आरंभ है तो यह आगे कार्यवाही नहीं करेगा और यदि ऐसा अन्वेषण पहले से आरंभ है तो यह आगे कार्यावाही नहीं करेगा और सम्बद्ध अभिकरण इस अधिनियम के अधीन ऐसे अपराधों की बाबत सुसंगत दस्तावेजों और अभिलेखों को गंभीर कपट अन्वेषण कार्यालय को अन्तरित करेगा|

(3) जहाँ केंद्रीय सरकार द्वारा कंपनी के कार्यों का अन्वेषण, गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को सौंपा गया वहाँ यह अन्वेषण ऐसी रीति में करेगा और ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण करेगा जो इस अध्याय में उपबंधित है; और ऐसी अवधि में जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, केन्द्रीय सरकार को अपनी रिपोर्ट, सौंपेगा |

(4) गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय का निदेशक, अन्वेषण अधिकारी द्वारा कंपनी के कार्यों का अन्वेषण कराएगा जिसके पास धारा 217 के अधीन निरीक्षक की शक्ति होगी |

(5) कंपनी और इसके अधिकारी और कर्मचारी, जो कंपनी के नियोजन में है या रहे हैं, अन्वेषण अधिकारी को सभी जानकारी, स्पष्टीकरण, दस्तावेज़ और सहायता प्रदान करने के जिम्मेदार होंगे जो उसे अन्वेषण के संचालन के लिए अपेक्षित हों |

(6) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 के 2)[17] में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम की (धारा 447 में निहित अपराध) संज्ञेय होंगे और इन धाराओं के अधीन किसी अपराध के लिए अभियुक्त व्यक्ति को जमानत या उसके स्वयं के बंधपत्र पर तब तक निर्मुक्त नहीं किया जाएगा जब तक-

(i) ऐसी किसी निर्मुक्ति के लिए आवेदन का विरोध करने के लिए लोक अभियोजक को अवसर न दिया गया हो; और

(ii) जहाँ लोक अभियोजन आवेदन का विरोध करता है वहाँ न्यायालय का वह समाधान हो गया कि यह विश्वास करने के युक्तियुक्त आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत में रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध किये जाने की संभावना नहीं है:

परन्तु कोई व्यक्ति, जो सोलह वर्ष की आयु से कम है या कोई महिला है या रुग्ण या दुर्बल है, उसे जमानत पर निर्मुक्त किया जा सकेगा यदि विशेष न्यायालय ऐसा निदेश देता है:

परन्तु यह और कि विशेष न्यायालय इस उपधारा में निर्दिष्ट किसी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित द्वारा लिखित में परिवाद किये जाने पर ही लेगा अन्यथा नहीं-

(i) निदेशक, गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय; या

(ii) लिखित में साधारण या विशेष आदेश द्वारा उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत केंद्रीय सरकार का कोई अधिकारी|

(7) उपधारा (5) में विनिर्दिष्ट जमानत की मंजूरी पर परिसीमा, जमानत मंजूर करने पर दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन परिसीमाओं के अतिरिक्त होगी |

(8) यदि साधारण या विशेष आदेश द्वारा केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत गंभीर कपट अन्वेषण कार्यालय का निदेशक, अपर निदेशक या सहायक निदेशक, अपने कब्जे में सामग्री के आधार पर यह विश्वास करने का कारण (ऐसे विश्वास के कारण लिखित में अभिलिखित किये जाएँ) रखता है कि कोई व्यक्ति उपधारा (6) में निर्दिष्ट धाराओं के आधीन दंडनीय किसी अपराध का दोषी रहा है तो ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकेगा और ऐसी गिरफ्तारी के आधारों को, यथाशीघ्र, उसे सूचित करगा |

(9) उपधारा (8) के अधीन ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी के ठीक पश्चात गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय के निदेशक या सहायक निदेशक उस उपधारा में निर्दिष्ट अपने कब्जे की सामग्री के साथ आदेश के एक प्रति गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को, मुहरबंद लिफाफे में ऐसी रीति में अग्रेषित करेंगे जो विहित की जाए और गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय ऐसे आदेश और सामग्री को ऐसी अवधि के लिए रखेगा,जो विहित की जाए |

(10) उपधारा (8) के अधीन गिरफ्तारी व्यक्ति को चौबीस घंटो के भीतर आधिकारिता रखने वाले, यथास्थिति, न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट के समक्ष लाया जाएगा:

परन्तु गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय चौबीस घंटों की अवधि से अपवर्जित रहेगा |

(11) केन्द्रीय सरकार यदि ऐसा निदेश देती है तो गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय, केंद्रीय सरकार को एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा |

(12) अन्वेषण के पूरा होने पर, गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय, केन्द्रीय सरकार को अन्वेषण रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा |

(13) इस अधिनियम या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, अन्वेषण रिपोर्ट की एक प्रति इस सम्बन्ध में न्यालाय को आवेदन करके किसी सम्बद्ध व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जा सकेगी|

(14)अन्वेषण रिपोर्ट की जाँच के पश्चात (और ऐसी विधिक सलाह देने के पश्चात जो वह ठीक समझे) कंपनी और इसके अधिकारी और कर्मचारी, जो कंपनी के नियोजन में हैं या रहे हैं या कोई अन्य व्यक्ति जो कंपनी के कार्यों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संबध है, के विरुद्ध अभियोजन आरम्भ करने के लिए गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को निदेश दे सकेगी|

(15) इस अधिनियम या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किस बात के होते हुए भी आरोपों की विरचना के लिए विशेष न्यायालय में फाइल की गई अन्वेषण रिपोर्ट को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 की 2) की धारा 173 के अधीन पुलिस ऑफिसर द्वारा फाइल की गई रिपोर्ट समझी जायेगी |

(16) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 की 1) के उपबंधों के अधीन गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय द्वारा कोई अन्वेषण या की गई अन्य कारवाई या आरम्भ की गई कार्यवाही इस अधिनियम के अधीन अग्रसर होने के लिए इस प्रकार जारी रहेगी मानो यह अधिनियम पारित न हुआ हो |

(17) (क) यदि इस अधिनियम के अधीन गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय किसी अपराध का अन्वेषण कर रहा है तो ऐसे अपराध के सम्बन्ध में सूचना या दस्तावेज़ रखने वाला कोई अन्य अन्वेषण अभिकरण, राज्य सरकार, पुलिस प्राधिकारी, आय-कर प्राधिकारी गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय को ऐसी उपलब्ध सूचना या दस्तावेज़ प्रदान करेंगे |

(ख) गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय किसी अन्वेषण अभिकरण, राज्य सरकार, पुलिस प्राधिकारी या आय-कर प्राधिकारियों के पास उपलब्ध किसी जानकारी या दस्तावेजों को साझा कर सकेंगे जो ऐसे अन्वेषण अभिकरण, राज्य सरकार पुलिस प्राधिकारी या आय-कर प्राधिकारी के लिए किसी अन्य विधि के अधीन किसी अपराध या मामले की बाबत किये जा रहे अन्वेषण या जाँच के लिए सुसंगत या उपयोगी हो |

ख) अधिनियम 2008 की धारा 43 निम्नानुसार है-

"**43**. **सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण**– (1) केन्द्रीय सरकार सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज के अन्वेषण और उस पर ऐसी

रीति में, जो वह निदेश दे, रिपोर्ट देने के लिए निरीक्षक के रूप में एक या अधिक सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त करेगी, यदि-

(क) अधिकरण, या तो स्व: प्रेरणा से या सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की कुल संख्या के एक बटा पांच से अन्यून भागीदारों से प्राप्त किसी आवेदन पर, आदेश द्वारा यह घोषित करता है कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए; या

(ख) कोई न्यायालय, आदेश द्वारा यह घोषणा करता है कि किसी सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए|

(2) केंद्रीय सरकार किसी सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण करने और उस पर ऐसी रीति में जो वह निदेश दे, रिपोर्ट देने के लिए, निरीक्षक के रूप में एक या अधिक सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त कर सकेगी |

(3) उपधारा (2) के अनुसरण में निरीक्षक की नियुक्ति निम्नलिखित दशा में की जा सकेगी,-

(क) यदि सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की कुल संख्या के एक बटा पांच से अन्यून भागीदारी समर्थक साक्ष्य और ऐसी प्रतिभूति रकम के साथ, जो विहित की जाए, आवेदन करते हैं; या

(ख) यदि सीमित दायित्व भागीदारी ऐसा आवेदन करती है कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए; या

(ग) यदि केन्द्रीय सरकार की राय में, यह सुझाव देने वाली परिस्थितियाँ हैं कि-

(i) सीमित दायित्व भागीदारी का कारोबार उसके लेनदारों, भागीदारों या किसी अन्य व्यक्ति को कपट वंचित करने के आशय से या अन्यथा किसी कपटपूर्ण या विधिविरुद्ध प्रयोजन के लिए या उसके किन्हीं या किसी भागीदार के प्रतिकूल किसी अन्यायपूर्ण या अनुचित रीति में किया जा रहा है या किया गया है या सीमित दायित्व भागीदारी किसी कपटपूर्ण या विधिविरुद्ध प्रयोजन के लिए बनाई गई थी; या

(ii) सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं किये जा रहे हैं; या

(iii) रजिस्ट्रार या किसी अन्वेषण या विनियामक अभिकरण की रिपोर्ट प्राप्त होने पर, पर्याप्त कारण हैं कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए |"

26. 2013 अधिनियम के प्रावधानों को पढ़ने से पता चलता है कि अध्याय 29 में कुछ धाराएँ क्रमशः 447, 448, 449 और 452 के अधीन धोखाधड़ी, झूठे बयान, झूठे सबूत और संपत्ति को रोकने जैसे अपराधों के लिए सजा निर्धारित की गई है। कम से कम 10 लाख रूपये की राशि या कम्पनी के टर्नओवर के 1 प्रतिशत के बराबर की राशि से जुड़े धोखाधड़ी सज़ा में 10 साल तक की जेल हो सकती है| किसी कंपनी के कार्यों के संबंध में धोखाधड़ी का अपराध एक गंभीर अपराध माना जाता है और रिट याचिकाकर्ता अभिकथित रूप से इस तरह के अपराध के दोषी थे| 2013 के

अधिनियम का अध्याय 14 निरीक्षण, पूछताछ और जाँच से संबंधित है। धारा 210 के अधीन कंपनी के कार्यों की जाँच की जा सकती है। धारा 211 गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय (एसएफआईओ) की स्थापना के संबंध में विचार करता है, जिसकी अध्यक्षता किसी निदेशक द्वारा की जानी है और जिसमें योग्यता, सत्यनिष्ठा और बैंकिंग, कॉर्पोरेट मामलें, कराधान, फोरेंसिक ऑडिट, पूंजी बाजार, सूचना प्रौद्योगिकी, क़ानून या ऐसे अन्य क्षेत्र में अनुभव रखने वाले विशेषज्ञ शामिल होने हैं। निदेशक के नेतृत्व वाली एसएफआईओ इस प्रकार से एक सुगठित और सक्षम इकाई है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञ शामिल है। धारा 212 केंद्रीय सरकार को किसी कंपनी के कार्य की जाँच का काम एसएफआईओ को सौंपने का अधिकार देती है। ऐसा कार्य मिलने पर एसएफआईओ का निदेशक उप-धारा (1) के अधीन ऐसी संख्या के निरीक्षक नामित कर सकता है और कंपनी के कार्यों की जाँच उप-धारा (4) के अधीन जाँच अधिकारियों द्वारा करवा सकता है| उप-धारा (1) में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "*जाँच सौंपना*" है। उप-धारा (2) में एक महत्वपूर्ण सिद्धांत शामिल है कि केंद्र सरकार द्वारा एसएफआईओ को इस तरह की अन्वेषण सौंपे जाने पर, केंद्र सरकार या किसी भी राज्य सरकार की कोई अन्य अन्वेषण अभिकरण 2013 के अधिनियम के अधीन किसी भी दंडनीय अपराध के संबंध में जाँच के लिए आगे अग्रसर नहीं हो सकती और 2013 अधिनियम के अधीन इस तरह के अपराध के संबंध में दस्तावेजों और अभिलेखको एसएफआईओ को अंतरित करने के लिए बाध्य है ।

27. उपधारा (3) के अधीन जहां जाँच केंद्र सरकार द्वारा एसएफआईओ को इस प्रकार सौंपी जाती है, जाँच का संचालन अध्याय में दी गई रीति और प्रक्रिया के अनुसार किया जाना चाहिए और इस संबंध में एक रिपोर्ट विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर केंद्र सरकार को सौंपी जानी चाहिए। यह प्रावधान रिपोर्ट को विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर सौंपने पर विचार करता है । इसके बाद के प्रावधान फिर उप-धारा (8) के अधीन गिरफ्तारी सहित जाँच के विभिन्न चरणों पर विचार करता है और यह अगर यह उप धारा (11) के अधीन निदेशित है तो एसएफआईओ केंद्र सरकार को एक अंतरिम रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। इसके अलावा, उप-धारा (12) के अनुसार, जाँच पूरी होने पर, एसआईएफओ द्वारा केंद्र सरकार को "जाँच रिपोर्ट" सौंपी जाएगी। उप-धारा (12) के अधीन इस रिपोर्ट के आधार पर आगे की कार्यवाही की जा सकती है। उप-धारा (13) के अधीन "जाँच रिपोर्ट" की फ़ोटोकॉपी किसी भी संबंधित व्यक्ति द्वारा न्यायालय में इस संबंध में आवेदन करके प्राप्त की जा सकती है,

जबकि उप-धारा (14) के अधीन "जाँच रिपोर्ट" प्राप्त होने पर केंद्रीय सरकार कंपनी के खिलाफ अभियोजन शुरू करने के लिए एसएफआईओ को निदेश दे सकती है।

उप-धारा (12) के अधीन जाँच के पूरा होने पर "जाँच रिपोर्ट" प्रस्तुत किया जाना होगा, जबकि उप-धारा (11) के अधीन रिपोर्ट का स्वरूप अंतरिम रिपोर्ट का होगा और केंद्र सरकार के निर्देशानुसार प्रस्तुत किया जाएगा। इन प्रावधानों की पृष्ठभूमि में अब हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या उपधारा (3) के अधीन केंद्र सरकार को रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए जिस अवधि के ऊपर विचार किया गया है वह अनिवार्य है और इस तरह के अनुबंध का दायरा और सीमा क्या है। यहां यह भी बताया जाना चाहिए कि 2008 अधिनियम की धारा 43(2) के प्रावधान ऐसी किसी भी अवधि को मान नहीं लेते और एसएफआईओ को वर्तमान मामले में जाँच सौंपना 2013 अधिनियम के संबंधित प्रावधानों के साथ-साथ 2008 अधिनियम के अधीन था।

28. 2013 के अधिनियम की धारा 212(3) अपने आप में रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कोई निश्चित अवधि नहीं है जिसमें जाँच पूरी की जानी है । यहां तक कि उप-धारा (12) के अधीन जो "जाँच रिपोर्ट" के बारे में है, में भी किसी अवधि का कोई अनुबंध नहीं है। वास्तव में उप-धारा (12) के अधीन जाँच पूरी की जाने पर रिपोर्ट प्रस्तुत की जानी है एवं जाँच पूरी करने के लिए कोई अवधि निर्धारित नहीं है जो कि साधारण विधि के अधीन सामान्य सिद्धांतों के अनुरूप है। उदाहरण के लिए, ऐसी कोई निश्चित अवधि नहीं है जिसके भीतर दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन जाँच पूरी होनी चाहिए। यदि जाँच लंबी अवधि तक चलती है, तो संहिता की धारा 167 के अधीन कुछ अधिकार अभियुक्त के पक्ष में जा सकते हैं। लेकिन ऐसा कदापि विचारनहीं है कि यदि किसी निश्चित अवधि के भीतर जाँच खत्म नहीं हुई है, तो जाँच करने का अधिकार समाप्त हो जाएगा।

पुनः, 2013 के अधिनियम की धारा 213 की उप-धारा (2) ऐसी किसी अवधि की बात नहीं करती जिसमें कि अन्य जाँच अभिकरणों को हाथ थामें रखना है, न ही यह प्रावधान सुसंगत दस्तावेजों और अभिलेखों को एसएफआईओ से उक्त जाँच अभिकरणों को किसी अवधि या किसी घटना के पश्चात सौंपें जाने का उल्लेख है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण अधिनियम, 2008 (संक्षिप्त में "एनआईए अधिनियम") की धारा 6 के अधीन केंद्र सरकार अभिकरण (एनआईए) को एनआईऐ अधिनियम के अधीन अनुसूचित अपराध की जाँच सौंप सकती है और जहां इस तरह का निदेश दिया गया है, वहां राज्य सरकार को किसी भी लंबित जाँच को आगे नहीं बढ़ाना है और सुसंगत दस्तावेज और अभिलेखों को तत्काल अभिकरण (एनआईए) को प्रेषित करने हैं|लेकिन

एनआईए अधिनियम की धारा 7 के अधीन, अभिकरण पिछली मंजूरी के साथ, अपराध की जाँच और अपराध के विचारण के लिए मामले को राज्य सरकार को हस्तांतरित कर सकती है।

29. 2013 के अधिनियम की धारा 212 (3) कि उक्ति "*सौंपना*" सभी उद्देश्यों के लिए जाँच के हस्तांतरण पर विचार करती है जिसके बाद केंद्र सरकार या किसी राज्य सरकार के मूल जाँच अभिकरण उन अपराधों के सम्बन्ध में जाँच का संचालन करने या जाँच खत्म करने के लिए किसी भी शक्ति से वंचित हो जाती हैं जिन पर उनमें विचार किया गया है| उप-धारा (2) के अधीन जाँच के पूर्ण हस्तांतरण करने का विचार है। धारा 213 की उप-धारा (2) के अधीन हस्तांतरण किसी भी आकस्मिकता में रद्द या वापस नहीं होगा। यदि कोई समय सीमा निर्धारित की जाती है या उस पर विचार किया जाता है जिसके भीतर जाँच पूरी होनी चाहिए, तो तार्किक रूप से, प्रावधान इस बात का निपटारा करते कि यदि समय सीमा का पालन नहीं किया जाता है तो उस स्थिति में क्या होगा| कानून को ऐसी स्थिति पर भी जरूर विचार करना था जहाँ केंद्र सरकार या राज्य सरकार की किसी भी जाँच अभिकरण द्वारा की गई एक वैध जाँच जिसे एसएफआईओ को हस्तांतरित किया हो, उसे फिर से उक्त जाँच अभिकरणों को पुनः हस्तांतरित किया जाना हो। लेकिन कानून में इसका कोई उल्लेख नहीं किया गया है। यह हस्तांतरण अपरिवर्तनीय है और किसी भी तरीके से वापस नहीं लिया जा सकता है। एक बार सौंपे जाने के बाद, एसएफआईओ के पास जाँच का संचालन करने और उसे पूरा करने का अधिकार है| यदि ऐसा है, तो क्या निर्धारित अवधि के भीतर जाँच पूरी नहीं होने पर ऐसे अधिकार को घटाया या कम किया जा सकता है। क़ानून ने जाँच पूरी करने के लिए कोई निर्धारित अवधि नहीं की है। वर्तमान मामले में निर्धारिकरण दिनांक 20.06.2018 के आदेश में सामने आया। मुद्दा यह है कि क्या आदेश में दिए गए निर्धारिकरण से एसएफआईओ की शक्तियां को कम किया जा सकता है।

30. यह सर्वज्ञात है कि किसी निश्चित प्रक्रिया को योजना के समय यदि ऐसी प्रक्रिया कि अव्हेलना होने कि स्थिति में किसी नकारात्मक या प्रतिकूल परिणाम पर विचार नहीं किया जाता है, तो सुसंगत प्रावधान को आम तौर पर अनिवार्य नहीं निर्देशिका माना जाता है। इसके अलावा, ऐसे प्रावधान को उसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए जिसमें यह कानून में पाए जाते हैं। इस मामले में तीन बुनियादी विशेषताएं मौजूद हैं: -

1. 2013 अधिनियम की धारा 212 (2) के संदर्भ में एसएफआईओ को जाँच का पूर्ण हस्तांतरण और इस तरह के हस्तांतरण पर सभी दस्तावेजों और अभिलेखों को बाकी सभी जाँच अभिकरणों द्वारा को हस्तांतरित किया जाना आवश्यक है।

2. धारा 212 की उप-धारा (12) जाँच पूरी करने के लिए कोई अवधि निश्चित नहीं करती है।

3. धारा 212 की उप-धारा (11) के अधीन निदेश दिए जाने पर अंतरिम रिपोर्ट प्रस्तुत की जा सकती है।

इन तीन मुख्य विशेषताओं कि दृष्टि से यह नहीं कहा जा सकता है कि धारा 212 की उप-धारा (3) के अधीन वह निर्धारित अवधि जिसके अन्दर एसएफआईओ को रिपोर्ट प्रस्तुत करनी है, वह अवधि जाँच पूरी करने के लिए है और उस अवधि की समाप्ति पर एसएफआईओ के पक्ष में आदेश खत्म हो जाएगा| खत्म होने कि स्थिति में, कानून ने कुछ परिणामों पर विचार किया होगा, जिसमें मूल जाँच अभिकरणों को जाँच को पुनः हस्तांतरित करना शामिल होता, जिन्हें धारा 212 की उप-धारा (2) के अधीन पूरे अभिलेख को हस्तांतरित करने के लिए निदेशित किया गया था। किसी भी स्पष्ट अनुबंध के आभाव में, हमारे विचार में, यह व्याख्या की अवधि की समाप्ति के साथ, एसएफआईओ के पक्ष में आदेश समाप्त हो जाना चाहिए, कानून प्रणाली के लिए बड़ी हानि का कारण होगा| अगर ऐसी व्याख्या को स्वीकारा जाए तो जाँच के हस्तांतरण के साथ धारा 212 की उप धारा (2) के अधीन मूल जाँच अभिकरणों से जाँच का अधिकार से वंचित कर दिया जायेगा और अधिदेश की समाप्ति के साथ ही एसअफआईओ भी अशक्त हो जायेगा और इस से ऐसी बेतुकी परिस्थिति उत्पन्न हो जाएगी जहाँ गंभीर धोखाधड़ी के अपराध जाँच से बाहर रहेंगे | ऐसा कभी भी विचार नहीं हो सकता था| इसलिए जो एकमात्र अर्थ निकाला जा सकता है वह यह है की उस अवधि का निर्धारण जिसके अंतर्गत धारा 212 की उप-धारा (3) के अधीन केंद्रीय सरकार को रिपोर्ट जमा करनी है वह पूर्ण रूप से निर्देशित है| इस अनुबद्ध समय के पूरे होने के बाद भी, एसअफआईओ के पक्ष में अधिदेश और उप-धारा (1) के अधीन जाँच के सौंपे जाने पर रोक नहीं लगेगी| विचारा गया एकमात्र तार्किक अंत जाँच की समाप्ति के बाद अंतिम रिपोर्ट या "जाँच रिपोर्ट" को धारा 212 की उप-धारा (12)अधीन जमा कराया जाना है| इसलिए मौजूदा केस में यह नहीं कहा जा सकता की अधिदेश दिनांक 19.09.2018 को समाप्त हो गया था और एसअफआईओ निदेशक के आदेश के अधीन 10.12.2018 से लागू गिरफ्तारी वैसे भी अवैध और गैरकानूनी थी | वैसे भी वर्तमान केस में केंद्रीय सरकार ने दिनांक 14.12.2018 में समय बढ़ाने की मंजूरी दे दी थी| पर यह बात पूर्ण रूप से

मुद्दे से परे है क्योंकि मूल गिरफ़्तारी अपने आप में किसी भी प्रकार से अवैध नहीं थी| हमारे सुविचारित मत में, उच्च न्यायालय से उस आधार पर कार्यवाही करने में और अपील के ऊपर आदेश पारित करने में पूर्ण रूप से भूल हुई थी|

31. अत: इन अपीलों को स्वीकृत किया जाता है एवं अपील के अंतर्गत आदेश को रद्द किया जाए| क्योंकि रिट याचिकाकर्ताओं को अंतरिम राहत के द्वारा ज़मानत पर रिहाई का निदेश था, हम नीचे निदेशित करते हैं कि-

(अ) उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 20.12.2018 को रिट याचिका (फौजदारी) नं. 3842/2018 एवं याचिका (फौजदारी) नं. 3843/2018 में पारित आदेश को रद्द किया जाता है |

(ब) राहुल मोदी और मुकेश मोदी नामक रिट याचिकाकर्ताओं को आत्मसमर्पण करने के लिए और दिनांक 01.04.2019 पर सुबह 11 बजे विशेष न्यायालय, गुरुग्राम के समक्ष मौजूद रहने के लिए निदेशित किया जाता है | इसके बाद विशेष न्यायालय मामले पर गुणों के आधार पर विचार करे और देखे के यदि आरोपियों को हिरासत में डालने की जरुरत है|

(स) यदि उक्त रिट याचिकाकर्ता ऊपर दिए गए अनुबद्ध दिन और समय पर नहीं मौजूद होते तो उनके द्वारा प्रस्तुत व्यक्तिगत बंधपत्र और प्रतिभूति बंधपत्र को जब्त कर लिया जायेगा और अपीलकर्ता को रिट याचिकाकर्ता को गिरफ्तार कराने का अधिकार होगा|

(द) रिट याचिकाकर्ता इस न्यायालय में दिनांक 08.04.2019 तक अनुपालन शपथ-पत्र जमा करेंगे |

32. स्थानांतरण याचिका (फ़ौजदारी) नं. 35/2019 को गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय (एसअफआईओ) और उप निदेशक, एसअफआईओ (मूल प्रत्यर्थी गण द्वारा रिट याचिका (फौज़दारी) नं. 3960/2018 के स्थानांतरण की मांग करने के लिए दायर किया गया था | दिनांक 21. 12. 2018 को उक्त रिट याचिका को वरीयता देने वाले विवेक हरीव्यासी ने दावा किया कि उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 21.12.2018 को रिट याचिका (फौज़दारी) नं. 3842 और 3843/2018 में उसी प्रकार की राहत दी गयी थी| हालांकि इससे पहले कि याचिका पर विचार किया जाता दिनांक 20.12.2018 के दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और रिट याचिका (फौज़दारी) नं. 3960/2018 के स्थानांतरण की मांग करने वाली स्थानांतरण याचिका (फ़ौजदारी) नं. 35/2019 को भी वरीयता दी गयी|

33. दिनांक 08.03.2019 को विवेक हरीव्यासी के फ़ाज़िल अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उनके मुवक्किल सुसंगत न्यायालय के समक्ष जमानत के लिए आवेदन की याचना करेंगे और इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित निदेश पारित किया गया था:

> "स्था. या. (फौ.) सं. 35/20-19 में प्रत्यार्थी सं. 1 जमानत के लिए आवेदन दे सकता है और अगर ऐसा आवेदन दिया जाता है तो प्रश्नगत सम्बंधित न्यायालय यहाँ आक्षेपित उच्च न्यायालय के आदेश में दी गई टिपण्णी से बिना प्रभावित हुए गुणवत्ता के आधार पर अपना निर्णय देगा"

34. विशेष अनुमति याचिका (फौज.) सं. 94- 95- 2019 से उत्पन्न फौज़दारी अपीलों में हमारी उपर्युक्त निर्णयों की दृष्टि में इस स्थान्तरण याचिका में किसी पृथक आवेदन की आवश्यकता नहीं है अतः स्थानांतरण याचिका निपटाई जाती है|

35. अंत में आवश्यक रूप से हम कहेंगे की इस मामले के गुणवत्ता के विषय में ना हमने कोई विचार व्यक्त किया है जो सम्बंधित न्यायालय स्वतंत्र रूप से स्वयं देखेंगे और ना ही ऐसा माना जाना चाहिए|

.....न्याय.
(अभय मनोहर सप्रे)
.....न्याय
(उदय उमेश ललित)

नई दिल्ली
मार्च 27,2019

अस्वीकरण: देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी|

<u>प्रतिवेद्य</u>

भारतीय सर्वोच्चय न्यायालय
फौज़दारी अपीलीय क्षेत्राधिकार
<u>फौज़दारी अपील संख्या नं. 538- 539/2019</u>
(वि. अनु. या. (फौ.) सं. 94-95/2019 से उत्पन्न)

गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय ..... अपीलार्थी (गण)

बनाम

राहुल मोदी एवं अन्य ..... प्रत्यर्थी (गण)

<u>सह</u>

<u>स्थानांतरण याचिका (फौ.) सं. 35/2019</u>

<u>(गंभीर धोखाधड़ी जाँच कार्यालय एवं अन्य बनाम विवेक हरिव्यासी एवं अन्य)</u>

<u>निर्णय</u>

<u>न्या. अभय मनोहर सप्रे</u>

1. अपने सम्मानीय साथी न्यायमूर्ति उदय उमेश ललित द्वारा विस्तृत, सुविचारित एवं विद्वत निर्णय को पढ़ने का लाभ मुझे मिला|
2. मैं अपने विद्वान साथी के तर्क एवं निष्कर्ष से पूर्णतः सहमत हूँ जो विशिष्ट रूप से तर्क की स्पष्ट प्रक्रिया पर आधारित है| तथापि विवाद की प्रवृत्ति को ध्यान में रखते हुए मैं अपने कुछ शब्द जोड़ना चाहूँगा|
3. इन अपीलों में विचारण हेतु उठाये गए प्रश्नों में से एक प्रश्न जो दोनों पक्षधरों के फ़ाज़िल वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा युक्तियुक्त रूप से बहस भी किये गए वो कंपनी अधिनियम (एतत पश्चात "अधिनियम" के रूप में निदेशित) 2013 की धारा 212 की व्यापकता, विस्तार एवं प्रयोजन से सम्बंधित था एवं क्या विशेष रूप से अधिनियम की धारा 212 की उपधारा (3) का पालन अनिवार्य है अथवा निर्देशिक है और यदि ऐसा है तो क्यों|

4. जैसा कि मेरे फ़ाज़िल दताश्री न्या. ललित द्वारा उचित रूप से तर्क दिया है कि अध्याय 14 (अधिनियम की धारा 206 से 229) में रेखांकित अधिनियम की योजना को ध्यान में रखते हुए कि अध्याय 29 के साथ कम्पनी के निरीक्षण, जाँच और अन्वेषण से सम्बंधित मामलों का निपटारा करता है जो कि अधिनियम में निर्दिष्टित: विभिन्न अपराधों के लिए दंड/ जुर्माना निर्धारित करता है, अधिनियम की धारा 212 की उप- धारा (3) का अनुपालन पूर्णतः निदेशात्मक प्रकृति का है|
5. यदि प्रत्यर्थीगण (रिट याचीगण) के फ़ाज़िल अधिवक्ता का निवेदन है कि रिपोर्ट के प्रस्तुत करने से सम्बंधित अधिनियम की धारा 212 की उप-धारा (3) के अनुपालन के अनिवार्य होने को मान लिया जाए (जो मुझे भय है कि मैं स्वीकृत नहीं कर सकता) हमारे विचार में, धारा 212 को लागू करने का प्रयोजन विफल हो जाएगा और व्यर्थ बन जाएगा|
6. निस्संदेह, जब मैं सप्रयोजन व्याख्या का विख्यात सिद्धांत सुसंगत प्रावधान की साथ में व्याख्या करने में लगाता हूँ और यह मानता हूँ कि अधिनियम की धारा 212 की उप-धारा (3) की प्रवृत्ति निदेशिक है, यह उस कानूनी प्रयोजन की पूर्ति करता है, जिसके लिए अध्याय 29 लागू किया गया था|
7. मैं, इसलिए साथी न्यायधीश ललित के तर्क और निष्कर्ष से सहमत हूँ जो कि उनके द्वारा अधिनियम की धारा 212 की उपधारा (3) की व्याख्या के लिए दिए गए थे|
8. उपर्त्युक्त के आधार पर, प्रत्यर्थीगण के फ़ाज़िल अधिवक्ताओं की बाकी तर्कों पर गौर नहीं किया जाएगा|
9. जहाँ तक बाकी मुद्दों का सवाल है, साथी न्या. ललित ने उन्हें संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से निपटाया है| मैं पूर्ण रूप से उनसे सहमत हूँ|

.....न्या.
(अभय मनोहर सप्रे)

नई दिल्ली
मार्च 27, 2019

अस्वीकरण: देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी|